Bundelkhand Journal of Academic Research

डॉ. बी आर अंबेडकर के आर्थिक विचारों का अवलोकन

सुरेन्द्र कुमार[1], योगेन्द्र कुमार कुशवाहा[2]

1. **शोधार्थी (अर्थशास्त्र),** गायत्री शोध एवं प्रशिक्षण संस्थान (जीएसपीएस), अतर्रा, बांदा, उत्तर प्रदेश।
2. **शोधार्थी (अर्थशास्त्र),** गायत्री शोध एवं प्रशिक्षण संस्थान (जीएसपीएस), अतर्रा, बांदा, उत्तर प्रदेश।

(**Corresponding Author:** surendra531998@gmail.com)

https://doi.org/10.5281/zenodo.21316974

सारांश

जब भी कोई देश राजनीतिक या आर्थिक चुनौतियों का सामना करता है, तो अक्सर बुद्धिजीवियों और विशेषज्ञों को अपने देश के इतिहास में समाधान खोजने की आवश्यकता पड़ती है। ऐतिहासिक घटनाएँ, उसके लोग और उनके विचार, जिन्होंने देश और उसके लोगों के भविष्य को आकार दिया है। वे देश की विरासत होने के साथ–साथ वर्तमान चुनौतियों के समाधान के लिए भी सार्थक सिद्ध होते हैं। डॉ. बी.आर. अंबेडकर भारत में अपने समय के एक ऐसे महान विचारक, नेता और बुद्धिजीवी हैं जिन्होंने न केवल लाखों अछूतों का जीवन बदला, बल्कि भारत का संविधान प्रारूपित कर उसे एक विशाल लोकतांत्रिक राष्ट्र के रूप में आकारित करवाने में भी अप्रतिम योगदान दिया है। डॉ. अंबेडकर कानून, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, मीडिया, राजनीति और सामाजिक सुधार के क्षेत्र में पारंगत थे। उनका मानना था कि ब्रिटिश भारत में विऔद्योगीकरण और विनगरीकरण प्रक्रिया ने भारत को बहुआयामी नुकसान पहुँचाया है। जबकि औद्योगीकरण भारत की गरीबी और बेरोजगारी की समस्याओं का एक शक्तिशाली एवं स्वाभाविक समाधान था। भारत में जाति व्यवस्था के खिलाफ उनका संघर्ष तो था ही, वे अपने समकालीन भारतीय अर्थव्यवस्था के विशेषज्ञ भी थे। वे 20वीं सदी के भारत के उत्कृष्ट बुद्धिजीवियों में से एक थे। भारत के आर्थिक विचारों में उनका उल्लेखनीय योगदान है। सार्वजनिक वित्त, मुद्रा प्रणाली और कृषि से संबंधित उनके विचार भारतीय अर्थव्यवस्था में मील के पत्थर हैं। इसी पृष्ठभूमि में प्रस्तुत शोध पत्र मुख्यतः डॉ. बी.आर. अंबेडकर के आर्थिक विचारों के अवलोकन पर केंद्रित है।

आलेख सूचना

प्राप्त: 08 जुलाई, 2025 **स्वीकृत:** 27 अगस्त, 2025 **प्रकाशित:** 30 सितम्बर, 2025

सारणी: 00 **चित्र एवं ग्राफ:** 00 **स्रोत एवं संदर्भ:** 36

मुख्य शब्द: कृषि प्रणाली, मुद्रा प्रणाली, भूमि सुधार, राष्ट्रीयकरण, कराधान, सामाजिक न्याय।

परिचय एवं पृष्ठभूमिः डॉ. अंबेडकर के शुरुआती जीवन के 30–32 वर्षों का शिक्षण एवं पेशेवर लेखन अर्थशास्त्र से संबंधित था, जिसमें प्राचीन भारतीय वाणिज्य (1915); ईस्ट इंडिया कंपनी का प्रशासन एवं वित्त (1915), भारत का राष्ट्रीय लाभांश (1916), भारत में लघु जोतें एवं उनका समाधान (1918), रुपये की समस्या (1923), ब्रिटिश भारत में प्रांतीय वित्त का विकास (1925) के साथ साथ 13 शोध समीक्षाएं आदि में उनका आर्थिक विश्लेषण और आर्थिक विचार मिलते हैं। डॉ. अंबेडकर 20वीं सदी के भारत के सर्वश्रेष्ठ बुद्धिजीवियों में से एक थे। मार्क्सवादी अर्थशास्त्री पॉल बरन ने अपने एक आलेख में बौद्धिक कार्यकर्ता और बुद्धिजीवी के बीच अंतर स्पष्ट करते हुए कहा कि बौद्धिक कार्यकर्ता वह है जो अपनी बुद्धि का उपयोग जीविकोपार्जन के लिए करता है, जबकि बुद्धिजीवी बुद्धि का उपयोग आलोचनात्मक विश्लेषण और सामाजिक परिवर्तन के लिए करता है। बरन की दृष्टि में, डॉ. अंबेडकर बौद्धिक कार्यकर्ता की बजाय एक बुद्धिजीवी हैं। एंटोनियो ग्राम्शी का मानना है कि डॉ. अंबेडकर जैविक बुद्धिजीवी होने का उत्कृष्ट उदाहरण हैं जो एक संपूर्ण सामाजिक वर्ग के हितों का प्रतिनिधित्व और अभिव्यक्ति करता है। उनकी विद्वता के बारे में नोबेल पुरस्कार सम्मानित अर्थशास्त्री प्रोफेसर अमर्त्य सेन ने कहा है कि "डॉ. अंबेडकर अर्थशास्त्र में मेरे पिता हैं; अर्थशास्त्र के क्षेत्र में उनका योगदान अद्भुत है और उसे हमेशा याद रखा जाएगा"।

डॉ. अंबेडकर भारत में प्रशिक्षित अर्थशास्त्रियों की पहली पीढ़ी में से एक थे। वे अर्थशास्त्र में औपचारिक प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले पहले भारतीय राजनीतिज्ञ भी थे, जिनके शोध पत्र प्रसिद्ध अकादमिक पत्रिकाओं में प्रकाशित

हुए थे। डॉ. अंबेडकर ने शुरुआत में एक मौद्रिक अर्थशास्त्री के रूप में अपनी पहचान बनाई थी। उन्होंने रुपये की समस्या पर ऐसे समय में विचार किया जब औपनिवेशिक प्रशासन और भारतीय व्यापारिक हितों के बीच इसके मूल्य को लेकर टकराव चल रहा था। उनका तर्क था कि सरकार भारत में अपना माल बेचने वाले ब्रिटिश निर्यातकों की मदद के लिए एक अधिमूल्यित विनिमय दर बनाए रख रही है। अंततः मामले की जाँच के लिए ब्रिटिश सरकार ने 1925 में एक शाही आयोग गठित करने पर सहमति व्यक्त की थी।

वर्ष 1913 में डॉ. अंबेडकर को उच्च अध्ययन के लिए अमेरिका जाने वाले अध्येयता के रूप में चुना गया। यह उनके शैक्षिक जीवन का महत्वपूर्ण मोड़ साबित हुआ। उन्होंने वर्ष 1915 में कोलंबिया यूनिवर्सिटी से पोस्ट ग्रेजुएट की डिग्री प्राप्त की। वर्ष 1916 में डॉ. अंबेडकर ने कोलंबिया विश्वविद्यालय में अपनी थीसिस के रूप में "भारत का राष्ट्रीय लाभांशः एक ऐतिहासिक और विश्लेषणात्मक अध्ययन" (The National Dividend of India: A Historical and Analytical Study, 1916) प्रस्तुत किया, जो उनकी पीएच.डी. की डिग्री का आधार था। यह थीसिस आठ वर्ष बाद "ब्रिटिश भारत में प्रांतीय वित्त का विकास" (The Evolution of Provincial Finance in British Indi) नामक शीर्षक के तहत प्रकाशित हुई थी। इस सर्वोच्च डिग्री को प्राप्त करने के बाद वे भारत लौट आए और उन्हें बड़ौदा के महाराजा का सैन्य सचिव नियुक्त किया गया।

सितंबर, 1917 में अपनी छात्रवृत्ति की अवधि समाप्त होने पर वे वापस शहर लौट आए और नौकरी करने लगे। लेकिन शहर में थोड़े ही समय नवंबर, 1917 तक रहने के बाद वह बम्बई रवाना हो गए। बम्बई में वे राजनीतिक अर्थव्यवस्था के प्रोफेसर के रूप में सिडेनहैम कॉलेज में पढ़ाने लगे। सुविज्ञ होने के कारण वह छात्रों के बीच बहुत लोकप्रिय थे। हालांकि, लंदन में कानून और अर्थशास्त्र की पढ़ाई दोबारा शुरू करने के लिए उन्होंने अपने पद से इस्तीफा दे दिया। इसके बाद आगे की पढ़ाई के लिए वह लंदन चले गए और उन्हें लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स एंड पॉलिटिकल साइंस में डी.एससी. की तैयारी करने की भी अनुमति दी गई। वर्ष 1921 में उन्होंने "प्रोविंशियल डिसेंट्रलाइजेशन ऑफ इम्पीरियल फाइनेंस इन ब्रिटिश इंडिया'' पर अपनी थीसिस लिखी और लंदन यूनिवर्सिटी से एम. एससी. की डिग्री प्राप्त की। उसके बाद उन्होंने कुछ समय जर्मनी की बॉन यूनिवर्सिटी में बिताया। वर्ष 1923 में उन्होंने डी.एससी. (डॉक्टर ऑफ साइंस) के लिए अपनी थीसिस "द प्रॉब्लम ऑफ द रुपीः इट्स ऑरिजन एंड इट्स सॉल्यूशन" प्रस्तुत की थी। इस तरह, उनके प्रमुख आर्थिक विचार निम्नलिखित पुस्तकों में पढने को मिलते हैंः

1. ब्रिटिश भारत में साम्राज्यवादी वित्त का विकेंद्रीकरण (Provincial Decentralization of Imperial Finance in British India): 1921
2. रुपये की समस्याः उद्भव और समाधान (The Problem of the Rupee: its origin and its solution): 1923
3. ब्रिटिश भारत में प्रांतीय वित्त का विकास (The Evolution of Provincial Finance in British India): 1925

प्रस्तुत शोधपत्र अर्थशास्त्र के क्षेत्र में डॉ. बी. आर. अंबेडकर के योगदान का अवलोकन करता है, जिसमें लोक वित्त, कृषि अर्थशास्त्र, आर्थिक विकास में जाति व्यवस्था की समस्या, कृषि एवं भूमि सुधार, कराधान नीति के विचार, उद्योगों का राष्ट्रीयकरण, आर्थिक विकास की रणनीति, उद्यम अर्थव्यवस्था, जनसंख्या नियंत्रण एवं परिवार नियोजन, महिलाओं का आर्थिक उत्थान, जल संसाधन नीति, मानव पूंजी की अवधारणा, भारतीय मुद्रा प्रणाली, भारतीय रिज़र्व बैंक के गठन, रुपये की समस्या जैसे अर्थशास्त्र के विभिन्न क्षेत्रों में उनके प्रमुख योगदानों का अवलोकन किया गया है।

कृषि एवं भूमि सुधार पर विचारः किसानों की समस्या और औपनिवेशिक कृषि नीति के बारे में डॉ. अंबेडकर ने बिशप हेबर के हवाले से लिखा है कि भारतीय किसान मितव्ययिता से खेती करते है और अनाज को बुद्धिमानी से उपयोग करते है। फिर भी अनुकूल मानसून के दौरान अनाज के उनके प्रबंधन अपर्याप्त हो जाते है। जब उनकी फसल थोडी सी विफल हुई, तब सरकारी सहायता भी पुरुषो, महिलाओं और बच्चों को मरने से नहीं रोक पाई। इस बदहाली का कारण ईस्ट इंडिया कंपनी और औपनिवेशिक कलेक्टरों की कृषि और किसान विरोधी नीतियाँ है। बिशप हेबर लिखते हैं कि "इंग्लैंड के विकास में भारत का बहुत बड़ा योगदान है। लेकिन हजारों भारतीय जो कपास के उत्पादन में अपनी आजीविका कमाते थे, उनके पास आज खाने के लिए कुछ भी नहीं है। जबकि अमेरिका और इंग्लैंड की स्थिति काफी अच्छी है।" डॉ. अंबेडकर ने इतिहासकार एच. एच. बिल्सन का हवाला देते हुए लिखा कि "इंग्लैंड के व्यापारिक व्यवहार भारत के प्रति अन्यायपूर्ण थे। इंग्लैंड को भारतीय सूत और रेशम बेची जा सकती है, जो कि इंग्लैंड में 50 से 60 प्रतिशत सस्ती है। लेकिन भारतीय निर्यात पर रोक लगाने के लिए और अपने कपास व रेशम उद्योगों की रक्षा के लिए इंग्लैंड ने भारतीय उत्पादों पर 70 से 80 प्रतिशत कर लगाया है। अगर इंग्लैंड ने भारतीय सामानों पर ऐसे निषेध करों और आदेशों को लागू नहीं किया होता तो पैस्ले और मैनचेस्टर की मिल्स वाष्प शक्ति के बावजूद पूरी तरह बंद हो सकती थी"। स्पष्ट है कि ब्रिटिश सरकार की नीतियाँ कृषि और किसान विरोधी रही हैं।

डॉ. अंबेडकर का मानना था कि कृषि सुधार, प्रच्छन्न बेरोजगारी और बेहतर भूमि उपयोग के लिए औद्योगीकरण आवश्यक है। जोतों के आकार और उत्पादकता संबंध का विश्लेषण करते हुए डॉ. अंबेडकर अन्य देशों के अध्ययनों की समीक्षा करते हैं, और सर हेनरी कॉटन को उद्धृत करते हैं कि "भारत में कृषि को बहुत अधिक खतरा है"। उन्होंने एक महत्वपूर्ण आयाम पर प्रकाश डाला जो बाद के वर्षों में और आज भी भारत के विकास के संदर्भ में महत्वपूर्ण बना हुआ है। उन्होंने कहा कि "एक बड़ी कृषि आबादी वास्तविक खेती में भूमि के निम्नतम अनुपात के साथ का अर्थ है कि कृषि पर निर्भर जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा फालतू और बेकार है। ऐसी स्थिति में बढ़ी हुई कृषि जोतें बेकारश्रम की समस्या को बढ़ाएंगी। अतः लोगों की निर्भरता भूमि पर कम करने के लिए भारत का औद्योगिकरण ही "भारत की कृषि समस्याओं के लिए सबसे सुगम उपाय है" और भारत की "दोषपूर्ण राजनीतिक अर्थव्यवस्था" को देखते हुए पर्याप्त अधिशेष उत्पन्न करने के लिए भी। स्पष्ट है कि आधुनिक विकास सिद्धांतकारों ने कृषि विकास में उद्योग की भूमिका और प्रच्छन्न बेरोजगारी की धारणा के बारे में जो मान्यताएं और नियम स्थापित किए हैं, उनसे बहुत पहले डॉ. अंबेडकर ने कृषि–उद्योग संबंधों के बारे में तर्क दे दिया था।

डॉ. अंबेडकर पहले भारतीय अर्थशास्त्री थे जिन्होंने उपखंडन की समस्या का परीक्षण किया और आर्थिक जोतों को वैज्ञानिक रूप से परिभाषित किया। कृषि सुधारों के क्रम में उन्होंने समेकन के मुद्दे का आलोचनात्मक परीक्षण करते हुए पाया कि संपत्ति विरासत और जनसंख्या वृद्धि कृषि समस्याओं का मुख्य स्रोत है। वे अपनी विवेचना में कहते हैं कि "... यदि यह कहा जाए कि भारतीय कृषि छोटी और बिखरी हुई जोतों से ग्रस्त है तो हमें न केवल इन्हें समेकित करना चाहिए, बल्कि उनका विस्तार भी करना चाहिए। यह ध्यान रहना चाहिए कि चकबंदी द्वारा छोटी जोतों की बुराइयों को दूर किया जा सकता है। इसलिए यह आवश्यक है कि चकबंदी द्वारा इन्हें बड़ी आर्थिक जोतों में बदला ज़ाये।" उन्होंने प्रसिद्ध कृषि अर्थशास्त्री प्रोफेसर जेवांस के उन विचारों की आलोचना की है कि प्रत्येक बड़ी जोत आर्थिक जोत होती है। उन्होंने प्रोफेसर जेवांस की उस परिभाषा का भी खंडन किया, जो आर्थिक जोत को उपभोग के आधार पर परिभाषित करती है और दृढ़ता के साथ तर्क देते हुए कहा है कि आर्थिक जोत का आधार उत्पादन होना चाहिए। उन्होंने राज्य पूंजीवादी व्यवस्था के अंतर्गत सामूहिक कृषि की अवधारणा का सुझाव संविधान सभा को दिया था। लेकिन वर्चस्व वाले ग्रामीण जमींदार, अभिजात वर्ग और भूमि से जुड़ी जातियों के विरोध के कारण यह सुझाव नकार दिया गया था।

भारतीय कृषि पर डॉ. अंबेडकर के विचार उनके आलेख "भारत में लघु जोतें एवं उनके समाधान (Small Holdings in India and their Remedies:1918)" और "स्थिति एवं अल्पसंख्यक (Status and Minorities:1947)" में पाए जाते हैं। उन्होंने उल्लेख किया कि कुछ लोगों के पास ज़मीन होना भारतीय कृषि की एक गंभीर समस्या है, जिसके परिणामस्वरूप खेती एवं संसाधनों के उपयोग में कठिनाई, लागत में वृद्धि, कम उत्पादकता, अपर्याप्त आय और निम्न जीवन स्तर जैसे कई नुकसान हैं। डॉ. अंबेडकर के अनुसार कृषि की उत्पादकता न केवल भूमि के आकार से संबंधित है, बल्कि पूंजी, श्रम और इनपुट जैसे अन्य कारकों से भी संबंधित है। इसलिए, यदि पूंजी या श्रम पर्याप्त मात्रा और गुणवत्ता में उपलब्ध नहीं हैं, तो बड़े आकार की भूमि भी अनुत्पादक हो सकती है। इसके विपरीत, यदि ये संसाधन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हों तो छोटे आकार की भूमि भी उत्पादक बन जाती है। इसी विचार के साथ स्वतंत्रता के बाद 'भूमि हदबंदी अधिनियम' पारित किया गया। कृषि समस्या के समाधान के लिए उनका सुझाव है कि सामूहिक खेती, भूमि की आर्थिक जोत या भूमि का समान वितरण, बड़े पैमाने पर औद्योगीकरण, सरकार द्वारा सहायता, पानी, बीज, उर्वरक आदि का प्रावधान किया जाना चाहिए।

उन्होंने महाराष्ट्र की कृषि प्रणाली में प्रचलित खोती प्रथा को समाप्त करने के लिए संघर्ष किया। दरअसल, खोती प्रथा ब्रिटिश भारत में महाराष्ट्र के कोंकण क्षेत्र के रायगढ़, रत्नागिरी, कोलाबा और सिंधुदुर्ग जिलों में प्रचलित एक अन्यायपूर्ण व्यवस्था थी, जहाँ खोत (गाँव का प्रशासनिक अधिकारी) किसानों से कृषि उपज इकट्ठा कर सरकार को देता और किसानों का शोषण करता था। खोत एक प्रकार के जमींदार या वतनदार थे, जिनके कारण किसानों का जीवन दूभर था और वे पीढ़ियों तक दमन का शिकार होते रहे हैं, क्योंकि खोती व्यवस्था के कारण किसानों का व्यापक शोषण होता था, जिससे उन्हें लंबे समय तक गरीबी और दमन का सामना करना पड़ता था।

डॉ. अंबेडकर का मानना था कि खोती जैसी सामंतवादी प्रथाएं सामाजिक और आर्थिक न्याय के सिद्धांतों के विरुद्ध हैं, और उनका उन्मूलन आवश्यक है ताकि किसानों को सम्मानजनक जीवन और उत्पादन का स्वाधिकार मिल सके। उनके अनुसार खोती प्रथा में 'खोत' (जमींदार) किसानों से लगान वसूलते और मनमाने ढंग से किसानों पर अत्याचार करते थे, उन्हें कभी–कभी जमीन से बेदखल भी कर देते थे। वे कर संग्रहकर्ता (ब्रिटिश सरकार) और करदाता (निम्न भूमिधारकों) के बीच मध्यस्थ थे। खोती ब्रिटिश क्षेत्र से एकत्रित कर राजस्व को ब्रिटिश सरकार को सौंपने के लिए ज़िम्मेदार थे, जिसके लिए वे निम्न भूमिधारकों का खुलकर शोषण और दुर्व्यवहार करते थे। डॉ. अंबेडकर ने खोती प्रथा को किसानों के उत्पीड़न का एक रूप मानते हुए महसूस किया कि इसे समाप्त करने के लिए कानून बनाना आवश्यक है और वर्ष 1937 में बॉम्बे विधान सभा में इसको समाप्त करने के लिए विधेयक प्रस्तुत किया,

जिसे "खोती उन्मूलन अधिनियम" के नाम से जाना जाता है। अंततः उनके प्रयासों से खोती प्रथा का उन्मूलन हुआ, जिससे किसानों को उनके अधिकार वापस मिले थे।

मौद्रिक प्रणाली पर विचारः डॉ. अंबेडकर ने भारतीय मौद्रिक प्रणाली की आलोचनात्मक समीक्षा करते हुए रुपये की समस्या पर अपना शोध प्रस्तुत किया, जिसे उन्होंने भारत में ब्रिटिश शासन के दौरान मुद्रा नीति को विनियमित करने का तरीका माना है। उन्होंने ब्रिटिश काल की मौद्रिक नीति की तीखी आलोचना करते हुए सुझाव दिया कि भारत को एक ऐसी मौद्रिक प्रणाली अपनानी चाहिए, जो आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर और न्यायपूर्ण हो। उन्होंने लंदन में अपनी डॉक्टरेट थीसिस में भारत की मुद्रा नीति का गहन विश्लेषण किया। ब्रिटिश मौद्रिक प्रणाली पर उनका तर्क था कि इसने भारत के आर्थिक शोषण में योगदान दिया है। जबकि मौद्रिक प्रणाली ऐसी होनी चाहिए, जो भारत को वित्तीय रूप से संप्रभु, आत्मनिर्भर और नैतिक रूप से मजबूत बनाए।

उल्लेखनीय है कि लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स एंड पॉलिटिकल साइंस में डॉ. अंबेडकर ने पर्यवेक्षक प्रो. एडविन कैनन के मार्गदर्शन में अपनी डॉक्टरेट थीसिस "द प्रॉब्लम ऑफ द रुपीः इट्स ओरिजिन एंड इट्स सॉल्यूशन" को संपन्न किया था। यह थीसिस एक ऐतिहासिक सर्वेक्षण के रूप में लिखी गई है, जिसमें ब्रिटिश सरकार की मौद्रिक गतिविधियों का विवेचन किया गया है। दरअसल, वर्ष 1893 औपनिवेशिक सरकार के सुधारों और स्वर्ण मानक के प्रबंधन के प्रयासों की शुरुआत का वर्ष है। यह भारतीय सिक्का अधिनियम, 1870 के संशोधन वर्ष को भी चिह्नित करता है। यह एकमात्र अधिनियम था जो ब्रिटिश शासन के तहत भारतीय उपमहाद्वीप के मुद्रा प्रबंधन से संबंधित था (सिन्हा, 1970)। इसलिए, अंबेडकर ने ऐतिहासिक सर्वेक्षण के रूप में 1800–1893 तक भारतीय मुद्रा प्रणाली के सबसे उपेक्षित हिस्सों को भी प्रस्तुत किया है। हालांकि, अंबीराजन (1999) और नरेंद्र जाधव (1991) के आलेख इस पर कोई प्रकाश नहीं डालते हैं। जाधव (1991, पृष्ठ–980) का दावा है कि भारतीय मौद्रिक प्रणाली और उसके संचालन का मूल्यांकन करने के बाद, अंबेडकर स्वर्ण–विनिमय मानक के बजाय स्वर्ण–मानक के पक्ष में थे। हालांकि, जाधव अंबेडकर के आदर्श दृष्टिकोण को नज़रअंदाज़ कर देते हैं, कि वे स्वर्ण–मानक के नहीं, बल्कि एक समान मुद्रा व्यवस्था के पक्षधर थे। जबकि डॉ. अंबेडकर के विचारों का वर्तमान भारतीय मुद्रा प्रणाली पर गहरा प्रभाव है। ब्रिटिश शासन के दौरान, जब भारत सरकार भारतीय रुपये के गिरते मूल्य से जूझ रही थी, तब (1923) उन्होंने तर्क दिया कि स्वर्ण विनिमय मानक में स्थिरता नहीं है। भारत जैसे विकासशील देश स्वर्ण विनिमय मानकों को वहन नहीं कर सकते। इससे मुद्रास्फीति और मूल्य वृद्धि का जोखिम भी बढ़ जाता है। उन्होंने आँकड़ों और कारणों से यह साबित किया कि कैसे भारतीय रुपये का मूल्य कम हो रहा है, जिससे रुपये की क्रय शक्ति गिर रही है। उन्होंने सुझाव दिया कि सरकारी घाटे को नियंत्रित किया जाना चाहिए और मुद्रा का चक्रीय प्रवाह होना चाहिए। उन्होंने यह भी सुझाव दिया कि विनिमय दर स्थिरता की तुलना में मूल्य स्थिरता पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए।

उन्होंने अपने शोध प्रबंध "द प्रॉब्लम ऑफ द रुपीः इट्स ओरिजिन एंड इट्स सॉल्यूशन, 1923" में 3 लोकप्रिय हस्तियों से बातचीत का भी ज़िक्र किया गया है, जिसमें एक तो उनके डॉक्टरेट पर्यवेक्षक प्रो. एडविन कैनन (1861–1935), दूसरा जॉन मेनार्ड कीन्स (1883–1946) और तीसरा एडविन केमेरर (1875–1945) थे। थीसिस में विवेचन के दौरान कीन्स का ज़िक्र 14 मौकों पर आता है। कीन्स और अंबेडकर के बीच बहुत कम सहमति है। यह असहमति इसलिए भी हो सकती है कि कीन्स एक ब्रिटिश अर्थशास्त्री थे, जिनका भारतीय मुद्रा प्रणाली के विश्लेषण का दृष्टिकोण औपनिवेशिक था। इसके अलावा कीन्स के बीच असहमति संदर्भ में अंतर के कारण भी हो सकती है, क्योंकि अंबेडकर का मानना है कि मुद्रा प्रणाली में रुपये की स्थिरता प्राप्त करने के लिए, सामान्य क्रय शक्ति का स्थिर होना आवश्यक है, अर्थात रुपये की सामान्य क्रय शक्ति का स्थिर होना वास्तविक मुद्रा स्थिरता के लिए आवश्यक शर्त है जो कीन्स से भिन्न मत था। जैसा कि उन्होंने कहा कि "कीन्स जिन निष्कर्षों पर पहुँचे हैं, वे मेरे निष्कर्षों से बिल्कुल विपरीत हैं। यह मतभेद उस मूलभूत तथ्य से उपजा है, जिसे प्रोफ़ेसर कीन्स ने पूरी तरह से नज़रअंदाज़ कर दिया है, कि जब तक हम रुपये की सामान्य क्रय शक्ति को स्थिर नहीं करते, तब तक उसे स्थिर करने का कोई उपाय नहीं है। विनिमय मानक ऐसा नहीं करता क्योंकि यह मानक केवल लक्षणों से संबंधित है और रोग तक नहीं जाता है। वास्तव में मेरे अनुसार, यदि ऐसा कुछ भी है, तो यह रोग को और बढ़ाता है" (द प्रॉब्लम ऑफ द रुपी, पृष्ठ–328)। जबकि अमेरिकी अर्थशास्त्री केमेरर के साथ अंबेडकर घनिष्ठ आत्मीयता और सहमति प्रदर्शित करते हैं। केमेरर एक मौद्रिक अर्थशास्त्री थे जिनका सार्वजनिक क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण प्रभाव था। संयुक्त राज्य अमेरिका के फेडरल रिजर्व सिस्टम की रूपरेखा को आकार देने में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका थी। अंबेडकर के शोध प्रबंध में केमेरर के कार्यों का सात भिन्न संदर्भों में उल्लेख किया गया है। डॉ. अंबेडकर स्वर्ण मानक और स्वर्ण विनिमय मानक के मूल्यांकन में केमेरर द्वारा स्थापित मानक के प्रति झुकाव के अनुरूप है।

पांचवें अध्याय 'स्वर्ण मानक से स्वर्ण विनिमय मानक तक' और अंतिम (सातवें) अध्याय 'स्वर्ण मानक की ओर वापसी' में, अंबेडकर विभिन्न मुद्रा व्यवस्थाओं के संबंध में कीन्स और केमेरर के विचारों के बीच संवाद प्रस्तुत करते हैं।

एक समान मुद्रा व्यवस्था के पक्ष में तर्क देते हैं, लेकिन इसकी अपनी सीमाएं भी हैं। जैसा कि उन्होंने कहा कि "यदि प्रबंधन को समाप्त करना वांछनीय है तो परिवर्तनीयता एक अपर्याप्त उपाय है; परिवर्तनीयता के साथ भी रुपया एक प्रबंधित रुपया ही रहेगा। ... यह भले ही अजीब लगे, लेकिन सुरक्षा एक निश्चित निर्गम सीमा वाले अपरिवर्तनीय रुपये में निहित है"(द प्रॉब्लम ऑफ द रुपी, पृष्ठ–614)। इस तरह, अंबेडकर का विवेचन औपनिवेशिक काल में प्रचलित विभिन्न मुद्रा व्यवस्थाओं के विकास को समझने का एक प्रारंभिक बिंदु माना जा सकता है। उनकी डॉक्टरेट थीसिस का मुख्य फोकस इस बात पर था कि भारतीय मौद्रिक मामलों को कैसे व्यवस्थित किया जाना चाहिए। हालाँकि, अर्थशास्त्र में उनकी रुचि कभी भी विशुद्ध रूप से सैद्धांतिक नहीं थी, लेकिन सार्वजनिक नीति पर इसके कई निहितार्थ थे, जैसा कि आर्थिक इतिहासकार एस. अंबीराजन ने 2001 में भारतीय अर्थशास्त्र में अंबेडकर के योगदान पर अपने एक भाषण में बताया था कि "रुपए पर गठित शाही आयोग को दिए अपने वक्तव्य में अंबेडकर ने इस विवाद को परिभाषित करते हुए कहा कि सबसे पहले यह समझना आवश्यक है कि इस विवाद में दो अलग–अलग प्रश्न शामिल हैं। पहला यह कि क्या हमें अपने विनिमय को स्थिर करना चाहिए और दूसरा, वह अनुपात क्या होना चाहिए जिस पर हमें विनिमय को स्थिर करना चाहिए?" वर्तमान संदर्भ बहुत अलग है, लेकिन अंबेडकर ने जिस तरह से विनिमय की समस्या को प्रस्तुत किया वह आज भी प्रासंगिक है। क्या भारतीय रिजर्व बैंक को रुपये की रक्षा करने का प्रयास करना चाहिए और उसे किस विनिमय मूल्य की रक्षा करनी चाहिए?

अंततः अंबेडकर ने रुपये के सीमित अवमूल्यन के पक्ष में तर्क दिया, जो उन विनिमय दरों के बीच कहीं था जिनके पक्ष में दो प्रतिस्पर्धी समूह थे। पहला, औपनिवेशिक सरकार ब्रिटिश व्यापारिक हितों का प्रतिनिधित्व करती थी, जो मौजूदा विनिमय दर को बनाए रखना चाहती थी, जबकि दूसरा, कांग्रेस भारतीय व्यापारिक हितों की ओर से बोल रही थी जो रुपया की सस्ती विनिमय दर चाहते थे। दरअसल, 19वीं सदी के अंत में रुपये की सस्ती विनिमय दर ने भारतीय निर्यातकों की मदद की थी। अंबेडकर का तर्क था कि सीमित अवमूल्यन से व्यापारी वर्ग के साथ–साथ कामगार वर्ग को भी लाभ होगा। हालांकि, बहुत अधिक अवमूल्यन से कमाने वाले वर्ग को नुकसान होगा क्योंकि अगर रुपये में बहुत अधिक गिरावट आई तो वे उच्च मुद्रास्फीति की चपेट में आ जाएँगे। इसलिए, रुपये के विनिमय मूल्य पर विचार करते समय इन दोनों समूहों के हितों को संतुलित किया जाना चाहिए, क्योंकि बहुत अधिक अवमूल्यन से मुद्रास्फीति के कारण कमाने वाले वर्ग की वास्तविक मजदूरी कम हो जाएगी।

भारतीय मुद्रा और वित्त पर रॉयल कमीशन को दिए अपने वक्तव्य में अंबेडकर ने कहाः "महत्वपूर्ण बात यह है कि कम विनिमय दर से कोई लाभ होता है, तो यह लाभ कहाँ से आता है? ज़्यादातर व्यापारियों का मानना है कि यह निर्यात व्यापार के लिए लाभ है और इतने सारे लोग इस पर आँख मूँदकर विश्वास कर चुके हैं। जबकि सभी के लिए यह एक आम धारणा है कि कम विनिमय दर पूरे राष्ट्र के लिए लाभ का स्रोत है। अगर यह समझ लिया जाए कि कम विनिमय दर का मतलब ऊँची आंतरिक कीमतें हैं, तो यह तुरंत स्पष्ट हो जाएगा कि यह लाभ राष्ट्र को बाहर से नहीं मिल रहा है, बल्कि देश के एक वर्ग द्वारा दूसरे वर्ग की कीमत पर प्राप्त लाभ है।"

अंबेडकर यह भी जानते थे कि रुपये की समस्या अंततः घरेलू मुद्रास्फीति की समस्या से जुड़ी है। अपने शोध प्रबंध के पुस्तक संस्करण की प्रस्तावना में उन्होंने बताया कि "...रुपये को तब तक स्थिर नहीं किया जा सकता, जब तक हम उसकी सामान्य क्रय शक्ति को स्थिर नहीं करते"। अंबीराजन ने भी बताया कि अंबेडकर स्पष्ट रूप से मूल्य स्थिरता और स्वचालित मौद्रिक प्रबंधन (जिसे नियम–आधारित मौद्रिक नीति कहा जा सकता है) के पक्षधर थे। अंबेडकर द्वारा मौद्रिक अर्थशास्त्र पर अकादमिक कार्य करने के बाद से भारतीय अर्थव्यवस्था में बहुत कुछ बदल गया है। लेकिन रुपये की समस्या के प्रति उनके कुछ सामान्य दृष्टिकोण अभी भी प्रासंगिक हैं। उदाहरण के लिए, एक खुली अर्थव्यवस्था में मूल्यह्रास के लाभ, वितरण संबंधी परिणामों को ध्यान में रखने की आवश्यकता, घरेलू अर्थव्यवस्था में मूल्य स्थिरता बनाए रखने की आवश्यकता, मौद्रिक प्रबंधन में विवेकाधिकार के बजाय नियमों को प्राथमिकता आदि से स्पष्ट है कि अंबेडकर अपने समय के व्यावहारिक अर्थशास्त्री थे, जो मुद्रा के परिमाण सिद्धांत और स्वर्ण मानक से दृढ़ता से जुड़े हुए थे।

जल संसाधन नीति पर विचारः चूंकि डॉ. अंबेडकर का महाड़ सत्याग्रह पानी से ही संबंधित था, जिसे उन्होंने 20 मार्च 1927 को दलितों के लिए महाड़ तालाब का पानी इस्तेमाल करने के लिए किया था, शायद इसीलिए, वे पानी के महत्त्व और औचित्य के प्रति बहुत सजग और सतर्क थे। डॉ. अंबेडकर ने पानी को केवल एक संसाधन नहीं, बल्कि एक सामाजिक और सांस्कृतिक मुद्दा माना, जिसे जाति आधारित बहिष्कार से मुक्त करने और सभी के लिए सुलभ बनाने पर जोर दिया है। उनकी जल संसाधन नीति में पानी को सामाजिक समानता एवं गरिमा का प्रश्न मानना, नदियों पर बहुउद्देशीय परियोजनाओं का निर्माण करके बाढ़ नियंत्रण, सिंचाई, विद्युत उत्पादन और नौवहन करना, जल संरक्षण और सतत विकास सुनिश्चित करना, जल प्रबंधन में स्थानीय समुदायों की भागीदारी को प्रोत्साहित करना आदि पहलू शामिल हैं। डॉ. अंबेडकर ने पानी को केवल एक वस्तु नहीं, बल्कि एक मूलभूत आवश्यकता और सामाजिक न्याय

का प्रतीक माना। उन्होंने पानी को जाति से जोड़ा और दलितों को जल से वंचित किए जाने को सामाजिक अलगाव का कारण बताया। उन्होंने बल दिया कि जल संसाधनों पर सभी वर्गों का समान अधिकार होना चाहिए और जल तक पहुँच दलितों को जातिगत पूर्वाग्रहों से मुक्त कराएगी। उन्होंने नदियों के पानी के बहुआयामी उपयोग के लिए बड़े बांधों और नहरों के निर्माण की वकालत की थी, जिसका उद्देश्य बाढ़ नियंत्रण, बिजली उत्पादन, सिंचाई और नौवहन को एक साथ हासिल करना था। उन्होंने जल संरक्षण को सतत विकास के लिए आवश्यक माना और सुनिश्चित किया कि जल संसाधनों का प्रबंधन इस तरह से किया जाए कि उनका अधिकतम लाभ मिल सके। उन्होंने जल प्रबंधन में स्थानीय समुदायों की भागीदारी बढ़ाने के लिए जल–उपयोगकर्ता संघों की स्थापना की सिफारिश की थी।

डॉ. अंबेडकर सिंचाई एवं विद्युत ऊर्जा नीति समिति के अध्यक्ष थे। समिति का मुख्य कार्य जल एवं विद्युत नीति तैयार करना था। उन्होंने वर्ष 1942 से 1946 तक वाइसरॉय की कार्यकारी परिषद में श्रम, सिंचाई और बिजली के सदस्य के रूप में काम करते हुए, नई जल एवं विद्युत नीति का खाका तैयार किया, जिसमें अमेरिका की टेनेसी वैली परियोजना को आदर्श माना गया। डॉ. अंबेडकर ने जल एवं विद्युत नीति की प्रकृति और उनके नियोजित विकास की रणनीति को प्रभावित किया था। दामोदर घाटी परियोजना, हीराकुंड नदी परियोजना, सोन नदी जैसी बड़ी परियोजनाओं का निर्माण डॉ. अंबेडकर की सिफारिशों के आधार पर किया गया। उन्होंने अंतर्राज्यीय जल विवादों और संघर्षों के समाधान के सुझाव दिए। उनके विचारों ने भारत की राष्ट्रीय जल संसाधन विकास नीति की नींव रखी, जिसमें जल के दोहन को समग्र दृष्टिकोण से देखा गया।

उन्होंने वर्ष 1942 से 1946 के बीच जिस जल नीति की नींव रखी थी, उसके तीन मुख्य अंग थे। पहला, नदियों की घाटी के आधार पर जल संसाधन विकास के लिए बहुउद्देशीय दृष्टिकोण अपनाना। दूसरा, नदी घाटी प्राधिकरण की अवधारणा और तीसरा, जल एवं बिजली संसाधनों के विकास को बढ़ावा देने के लिए केंद्र में तकनीकी विशेषज्ञ निकायों का निर्माण। वह रेलवे से ज़्यादा रिवर कैनल, रिवर प्रोजेक्ट्स के समर्थक थे। नदियों का उपयोग ज़्यादा लाभकारी बनाने के पीछे उनका तर्क था कि नदियों का पानी बिजली बनाने, सिंचाई और नौका परिवहन में बहुत मददगार साबित हो सकता है। इससे बाढ़ को भी आने से रोका जा सकता है।

मेरीटाइम इन्वेस्टमेंट समिट, 2016 के उद्घाटन पर प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने कहा था कि भारतीय संविधान के निर्माता अंबेडकर, भारत की जल संसाधन एवं नदी परिवहन नीति के सर्जक भी थे। उन्होंने कहा, "हम में से अधिकांश यह नहीं जानते हैं कि बाबासाहेब ने जल संसाधन, जल परिवहन और विद्युत से संबंधित दो महत्वपूर्ण संस्थाओं की नींव रखी थी। उनमें से एक केंद्रीय जल, सिंचाई एवं जल परिवहन आयोग और दूसरा, सेंट्रल टेक्निकल पॉवर बोर्ड है। डॉ. अंबेडकर भारत की जल संसाधन एवं नदी परिवहन नीति के निर्माता भी हैं। यह दुखद है कि भारत की जल नीति एवं जल संसाधनों के विकास में डॉ. अंबेडकर की महती भूमिका को लोगों के सामने आने से रोकने के लिए एक शक्तिशाली लॉबी लगातार काम कर रही है। जबकि उनकी भूमिका से संबंधित विस्तृत शासकीय अभिलेख उपलब्ध हैं, इसके बावजूद सुनियोजित प्रयास किए गए कि इस दूरदृष्टा के अप्रतिम योगदान को अकादमिक क्षेत्र और सार्वजनिक विमर्श में मान्यता न मिले"।

उन्होंने अपने बहुआयामी दृष्टिकोण को आज़ाद भारत की बड़ी–बड़ी नदी परियोजनाओं को साकार किया था। इसमें सबसे पहली योजना दामोदर रिवर वैली कॉर्पोरेशन था। दामोदर नदी को बंगाल और झारखंड का दुख कहा जाता रहा है क्योंकि इसकी वजह से इन क्षेत्रों में भयंकर बाढ़ आती है। जिस वक्त इस योजना को अमल में लाना था, उस समय वायसरॉय लॉर्ड वावेल थे। वह चाहते थे कि इसके लिए ब्रिटिश आर्किटेक्ट और इंजीनियर आएं। लेकिन डॉ. अंबेडकर ने वायसरॉय के खिलाफ़ अमेरिकन टेनेसी वैली अथॉरिटी को इस काम के लिए चाहते थे जिन्होंने अमेरिका में टेनेसी वैली योजना का निर्माण किया था। डॉ. अंबेडकर वायसरॉय के खिलाफ़ गए सिर्फ़ इसीलिए क्योंकि इस योजना से भारतीयों का हित जुड़ा था। हमने सामाजिक विज्ञान की किताबों में पहली बार भाखड़ा नांगल बाँध (सतलज नदी पर) और हीराकुड बाँध (महानदी पर) के बारे में जाना गया। लेकिन इन किताबों ने हमें इनके निर्माण के पीछे के विचारक के बारे में नहीं बताया। हालांकि, अकादमिक जगह ने यह हमें शुरू से बताया कि जवाहरलाल नेहरू बांधों को आधुनिक भारत के 'मंदिर' कहते थे। लेकिन इन 'मंदिरों' के विचारक की भूमिका के बारे में चर्चा तक नहीं की जाती। ये दोनों ही बाँध योजनाएं बाबा साहब की दूरदृष्टि के प्रमाण हैं। शायद इसीलिए, जल संसाधनों पर उनके महत्त्व को उजागर करने हेतु "जल नीतियों में डॉ. अंबेडकर का योगदान" पर दिसंबर 2016 में आयोजित सेंट्रल वाटर कमीशन के सेमिनार में केंद्रीय जल संसाधन मंत्री सुश्री उमा भारती ने घोषणा की थी कि 14 अप्रैल (बाबा साहब का जन्मदिन) को देश में राष्ट्रीय जल दिवस (नैशनल वाटर डे) के रूप में मनाया जाएगा। अतः बाबा साहब का जन्मदिन 'जल दिवस' के रूप में भी मनाया जाता है।

डॉ. अंबेडकर के जन्म शताब्दी वर्ष 1993 में 'जल संसाधनों के विकास में अंबेडकर का योगदान' प्रकाशित ग्रन्थ को केंद्रीय जल संसाधन, नदी विकास एवं गंगा संरक्षण विभाग ने वर्ष 2016 में 307 पृष्ठों के एक स्मारक ग्रन्थ के रूप में पुनर्प्रकाशन किया, जिसके सन्देश में तत्कालीन जल संसाधन मंत्री उमा भारती ने लिखा कि डॉ. अंबेडकर

भारत के जल संसाधनों के विकास और प्रबंधन के लिए समग्र और समन्वित दृष्टिकोण अपनाने के हामी थे। राष्ट्र निर्माण में डॉ. अंबेडकर के योगदान को देश को नज़रअंदाज़ नहीं करना चाहिए। उमा भारती ने लिखा, "अंतरराज्यीय जल विवाद अधिनियम 1956 और रिवर बोर्ड्स अधिनियम 1956 प्रमाणित करते हैं कि डॉ. अंबेडकर कई राज्यों में बहने वाली नदियों से संबंधित मुद्दों पर कितने सजग थे। जल विवाद अधिनियम की भूमिका में कहा गया है कि इसका उद्देश्य अंतरराज्यीय नदियों और नदी घाटियों के पानी से संबंधित विवादों का निपटारा करना है।"

वर्ष 1942 से 1946 के बीच डॉ. अंबेडकर ने देश के जल संसाधनों का सभी के हित में समुचित दोहन करने हेतु एक नई जल एवं विद्युत नीति का खाका तैयार किया था। उनका मानना था कि अमेरिका की टेनेसी वैली परियोजना भारत की नदीघाटी परियोजनाओं के लिए आदर्श हो सकती है। उनका कहना था कि नदियों पर बहुउद्देशीय परियोजनाओं का निर्माण किया जाना चाहिए, जिससे सिंचाई और विद्युत उत्पादन दोनों हो सके। इस तरह की परियोजनाओं से अकाल और बाढ़ को रोका जा सकेगा और देश की गरीब जनता का जीवन स्तर सुधारने में मदद मिलेगी। डॉ. अंबेडकर जल संसाधनों के विकास हेतु बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाओं को अपनाने पर जोर दिया। उन्होंने नदी घाटी प्राधिकरणों की अवधारणा भी विकसित की। इसे ही अब समन्वित जल संसाधन प्रबंधन कहा जाता है। वर्ष 1944 से 46 की अवधि में श्रम विभाग ने जिन नदी घाटी परियोजनाओं को लागू करने पर सक्रियता से विचार किया, उनमें दामोदर, सोन, महानदी (हीराकुंड), कोसी, चम्बल व दक्कन की नदियों से संबंधित परियोजनाएं शामिल थीं। इन योजनाओं से एक साथ कई लक्ष्य हासिल किये जाने थे, जिनमें बाढ़ नियंत्रण, सिंचाई, जल परिवहन, घरेलू उपयोग के लिए जल आपूर्ति व जल विद्युत उत्पादन शामिल थे। दामोदर घाटी परियोजना और हीराकुंड बहुउद्देशीय परियोजना हमें इस महान दूरदृष्टा की याद दिलाते हैं।

डॉ. अंबेडकर की उपलब्धियों को दूसरों का बताने के प्रयास श्यामा प्रसाद मुख़र्जी की हाल ही में प्रकाशित एक जीवनी में लेखक ने यह दावा किया है कि बहुउद्देशीय दामोदर नदी घाटी परियोजना, जो टेनेसी वैली परियोजना पर आधारित परन्तु उससे कहीं अधिक जटिल थी, डॉ. मुख़र्जी की एक असाधारण उपलब्धि थी। जबकि दामोदर नदी में 1943 में आई बाढ़ के बाद इस परियोजना की आवश्यकता अधिक तीव्रता से महसूस की गई थी। इसलिए, दामोदर घाटी निगम के संबंध में श्यामा प्रसाद मुख़र्जी के प्रति जो दावा किया गया है, उसका कोई प्रमाण नहीं है कि डॉ. मुख़र्जी ने इस परियोजना के क्रियान्वयन में कोई योगदान दिया था। यह सर्वज्ञात है कि जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में आजाद भारत के पहले मंत्रिमंडल, जिसमें डॉ. श्यामाप्रसाद मुख़र्जी भी शामिल थे, ने 15 अगस्त 1947 को शपथ ली थी। ऐसे में यह समझ से परे है कि दामोदर घाटी परियोजना, जिसकी शुरुआत डॉ. मुख़र्जी के उद्योग और आपूर्ति मंत्री के रूप में शपथ लेने के तीन साल पहले ही हो गई थी, के लिए उन्हें श्रेय कैसे दिया जा सकता है। डॉ. अंबेडकर के दामोदर घाटी परियोजना की स्थापना में योगदान के सम्बन्ध में अकाट्य तथ्यों के उपलब्ध होने के बावजूद, डॉ. मुख़र्जी के संबंध में जो दावे किये जा रहे हैं, उनका उद्देश्य केवल पाठकों और अध्येताओं को भ्रमित करना है। इससे यह पुरानी कहावत का सच एक बार फिर साबित होती है कि सफलता के कई पिता होते हैं।

कराधान नीति पर विचारः भारतीय माल पर ब्रिटिश सरकार के कर न केवल भेदभावपूर्ण थे, बल्कि उपयोग के अनुसार भी अलग–अलग थे। ब्रिटिश सरकार द्वारा जमीन पर लगाया गया कर केवल अत्यधिक ही नहीं था, बल्कि यह कई प्रान्तों में उतार–चढ़ाव के साथ अनिश्चित भी था। भारतीयों के लिए कर की दर 80 से 90 प्रतिशत थी, जबकि इग्लैंड में यह वर्ष 1798 तक 100 वर्षों के लिए 5 से 20 प्रतिशत के बीच थी। ब्रिटिश सरकार ने ब्रिटिश भारत पर औसतन भूमि कर 54 प्रतिशत, नमक पर कर 11 प्रतिशत, अफीम पर कर 8.7 प्रतिशत, सीमा शुल्क 6.2 प्रतिशत आरोपित कर किया था। परिणामस्वरूप, ब्रिटिश सरकार ने वर्ष 1792–93 से वर्ष 1885–86 के दौरान भारी राजस्व उत्पन्न किया। उन्होंने बताया कि कर प्रणाली न्यायसंगत नहीं थी। दोषपूर्ण कर प्रणाली से जमींदारों ने उपभोग की खपत का आनंद लिया और यूरोपीय सिविल सेवकों को कई प्रकार की छूट व विशेषाधिकार मिले। जबकि भारतीय गरीबों को नमक और अन्य वस्तुओं पर करों से परेशान किया जाता था। डॉ. अंबेडकर इतिहासकार एच. एच. बिल्सन का हवाला देते हुए स्वीकार किया था कि इंग्लैंड के व्यापारिक व्यवहार भारत के प्रति अन्यायपूर्ण थे। इंग्लैंड में भारतीय सूत और रेशम बेची जा सकती है, जो कि इंग्लैंड में 50 से 60 प्रतिशत कम है। हालांकि, भारतीय निर्यात पर रोक लगाने के लिए और अपने कपास व रेशम उद्योगों की रक्षा के लिए इंग्लैंड ने भारतीय उत्पादों पर 70 से 80 प्रतिशत कर लगाया। अगर इंग्लैंड ने भारतीय सामानों पर ऐसे निषेध करों और आदेशों का प्रयोग नहीं किया होता, तो पैस्ले और मैनचेस्टर की मिल्स वाष्प की शक्ति के बावजूद पूरी तरह बंद हो सकती थी।

डॉ. अंबेडकर ने होल्ट मैकेंगी के हवाले से लिखा है कि कुछ भारतीय वस्तुओं को प्रेसीडेंसी तक पहुँचने से पहले दस सीमा शुल्कों और कई अधीनस्थ चौकियों से गुजरना पड़ता था। माल का कोई आदान–प्रदान सीमा शुल्क की एक लाइन से अलग दो जिलों के बीच नहीं हो सकता था। इसलिए, उपभोक्ताओं को कर बोझ का सामना करना पड़ा और व्यापारिक माल के लिए अधिक भुगतान करना पड़ा। सरकार द्वारा लगाये गये कर के अलावा, सीमा शुल्क

अधिकारी भी रिश्वत की माँगते थे। वर्ष 1810 के विनियमन अधिनियम के अनुसार, यूके को निर्यात किए जाने वाले सामान जैसे कि इंडिगो, कपास, ऊन और भांग को सीमा शुल्क से छूट थी। भारतीयों के खिलाफ अंतर्देशीय करों पर लाई एनलबोरो का हवाला देते हुए अंबेडकर लिखते हैं कि भारत में आयातित कपास पर सीमा शुल्क 2—1/2 प्रतिशत और कपास निर्मित सूत पर 7—1/2 प्रतिशत कर था। भारत में उपभोग के कपास निर्मित सामान पर कुल कर 17—1/2 प्रतिशत था। इसी तरह, कच्चे चमड़े पर शुल्क 5 प्रतिशत, निर्मित चमड़े पर अतिरिक्त 5 प्रतिशत और चमड़े से बने जूते के लिए अतिरिक्त 5 प्रतिशत कर था। इस प्रकार, भारत में उपभोग होने वाले भारतीय चमड़े के सामान पर कुल कर 15 प्रतिशत था। आयातित चीनी पर 5 प्रतिशत का सीमा शुल्क और 5 प्रतिशत अतिरिक्त सीमा शुल्क था। उसी शहर से निर्मित और निर्यात योग्य चीनी पर भी 5 प्रतिशत कर का भुगतान किया जाना था। इस प्रकार भारत में खपत की चीनी पर कुल कर 15 प्रतिशत था। इस तरह स्पष्ट है कि ब्रिटिश सरकार की कर प्रणाली अन्याय को बढाने वाली और दोषपूर्ण थी।

डॉ. अंबेडकर ने 1936 में 'स्वतंत्र मजदूर पार्टी (Swatantra Majdur Party)' के घोषणा पत्र में कराधान पर अपने विचार व्यक्त किए। उन्होंने ब्रिटिश सरकार की दोषपूर्ण कराधान नीति, भू—राजस्व प्रणाली और इससे जुड़े करों का विरोध किया क्योंकि इन करों का बोझ समाज के गरीब वर्गों पर बहुत अधिक पड़ता है। वे मानते थे कि ब्रिटिश भारत की कर प्रणाली भेदभाव और असमानता पर आधारित थी। इसलिए, कराधान नीति पर उनका सुझाव था कि (i) कर, आय पर नहीं, बल्कि भुगतानकर्ता की क्षमता पर लगाया जाना चाहिए। (ii) गरीबों पर कम और अमीरों पर अधिक कर लगाया जाना चाहिए। (iii) एक निश्चित सीमा तक कर में छूट दी जानी चाहिए। (iv) कर लगाने में विभिन्न वर्गों के बीच समानता होनी चाहिए। (v) कर से लोगों के जीवन स्तर में गिरावट नहीं आनी चाहिए। (vi) कर प्रणाली को अधिक लचीला होना चाहिए (vii) कृषि भूमि पर कर नहीं लगाया जाना चाहिए। इस तरह, कर प्रणाली पर डॉ. अंबेडकर के विचार भारत की वर्तमान कर प्रणाली पर परिलक्षित हो रहे हैं, जो कराधान पर उनके दृष्टिकोण की प्रासंगिकता को सिद्ध करते हैं।

उद्यम अर्थव्यवस्था पर विचारः डॉ. अंबेडकर ने वर्ष 1923 में स्वतंत्र अर्थव्यवस्था, वैश्वीकरण, उदारीकरण और निजीकरण का सुझाव दिया था, जिसे भारत सरकार ने जुलाई, 1991 में अपनाया है। इस संबंध में डॉ. अंबेडकर एक सदी आगे थे। उनका मानना था कि यदि मुक्त अर्थव्यवस्था की नीति को सफल बनाना है, तो रुपये का मूल्य स्थिर रखना होगा। मुक्त उद्यम अर्थव्यवस्था आर्थिक विकास में वृद्धि, बेहतर कार्यकुशलता, नए बाजारों तक पहुंच और उपभोक्ताओं के लिए अधिक विकल्प उपलब्ध कराती है। यद्यपि डॉ. अंबेडकर मुक्त उद्यम अर्थव्यवस्था के सीधे समर्थक नहीं थे, लेकिन, वे बहुत प्रतिबंधात्मक अर्थव्यवस्था भी नहीं चाहते थे, बल्कि एक सामाजिक लोकतंत्र आधारित अर्थव्यवस्था पर ज़ोर देते थे, वे एक ऐसी अर्थव्यवस्था चाहते थे जिसमें आर्थिक समानता के साथ स्वतंत्रता भी हो, संसाधनों के समान वितरण द्वारा लोगों को सशक्त बनाने के अवसर हों, श्रमिक कल्याण को बढ़ावा मिले, कृषि को राज्य का संरक्षण मिले। वे आर्थिक प्रणाली को सामाजिक न्याय और समानता पर आधारित करना चाहते थे।

वे मानते थे कि राजनीतिक लोकतंत्र केवल तभी सफल हो सकता है, जब सामाजिक और आर्थिक लोकतंत्र भी मौजूद हो, क्योंकि आर्थिक समानता और सामाजिक न्याय ही वास्तविक स्वतंत्रता की नींव हैं। उनका मानना था कि मानव संसाधन (श्रमिक) ही किसी देश की वास्तविक संपत्ति हैं, जिनके अधिकारों को सुरक्षित करके और उन्हें कल्याणकारी लाभ प्रदान करके ही राष्ट्र का विकास संभव है। उन्होंने कृषि को 'राज्य उद्योग' बनाने का प्रस्ताव रखा था ताकि ज़मीन पर सरकार के निर्देशों के अनुसार खेती की जाए। यह उनके राज्य समाजवाद के व्यापक दर्शन का एक हिस्सा था। उनका मानना था कि देश का आर्थिक विकास उसकी जनसंख्या पर निर्भर करता है, इसलिए, जनसंख्या का मानवीय संसाधन के रूप में विकास करना अत्यंत महत्वपूर्ण है। उन्होंने व्यवसाय चुनने की स्वतंत्रता पर बल देते हुए कहा कि हर व्यक्ति को अपनी रुचि और क्षमता के अनुसार अपना व्यवसाय चुनने की स्वतंत्रता होनी चाहिए। पेशा जन्मजात होना अथवा जन्म के आधार पर श्रम का बँटवारा गुलामी का प्रतीक है। इसलिए, व्यवसाय योग्यता और कुशलता आधारित होने चाहिए।

जनसंख्या नियंत्रण पर विचारः डॉ. अंबेडकर का मानना था कि यदि जनसंख्या पर नियंत्रण नहीं किया गया तो देश की अर्थव्यवस्था पर नियंत्रण असंभव है। इसलिए उन्होंने भारत में जनसंख्या नियंत्रण और परिवार नियोजन की जोरदार वकालत की थी। बाद में, उनके विचारों के अनुरूप, भारत सरकार ने परिवार नियोजन को राष्ट्रीय नीति के रूप में अपनाया। भारत विश्व का पहला देश था जिसने 1952 में राष्ट्रीय परिवार नियोजन कार्यक्रम शुरू किया था। यह कार्यक्रम प्रजनन दर को कम करने और जनसंख्या वृद्धि दर को धीमा करने के उद्देश्य से शुरू किया गया था। उनका मानना था कि जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण महिलाओं के स्वास्थ्य और उनके सामाजिक कल्याण के लिए ज़रूरी

है, न कि केवल आर्थिक कारणों से। उन्होंने महिलाओं को परिवार नियोजन के बारे में खुलकर बात करने और अपने परिवार का आकार सीमित करने के लिए प्रोत्साहित किया। उन्होंने जन्म नियंत्रण, परिवार नियोजन और महिलाओं की आर्थिक स्वतंत्रता पर जोर देते हुए इस दिशा में समाज में खुले विमर्श के महत्व को भी बताया।

उन्होंने समाज के पारंपरिक विचारों के बजाय महिलाओं के स्वास्थ्य को प्राथमिकता देते हुए परिवार में बच्चों की संख्या सीमित करने का समर्थन किया। उन्होंने युवतियों को जल्दबाजी में शादी करने के प्रति आगाह करते हुए कहा कि बड़ी संख्या में बच्चे पैदा करना एक अपराध है। उन्होंने परिवार नियोजन को बढ़ावा देने वाले समाज सुधारक आर.डी. कर्वे का कानूनी बचाव भी किया, जो महिलाओं के यौन सुख के अधिकार की वकालत करते थे। अंबेडकर का मानना था कि महिलाओं को आर्थिक स्वतंत्रता मिलनी चाहिए, जो परिवार नियोजन को अपनाने में सहायक होती है। उन्होंने यह भी कहा कि जनसंख्या नियंत्रण से न केवल आर्थिक वृद्धि होती है, बल्कि शिक्षा, स्वास्थ्य और सामाजिक आदतों में सुधार होता है, जिससे एक पूर्ण और सुखी जीवन का निर्माण होता है।

भारतीय रिज़र्व बैंक के गठन में भूमिकाः भारतीय रिज़र्व बैंक की स्थापना हिल्टन यंग आयोग की सिफारिशों के आधार पर की गई थी। हिल्टन यंग आयोग के अध्यक्ष एडवर्ड हिल्टन यंग और सदस्य आर.एन. मुखर्जी, नॉरकोट वॉरेन, आर.ए. मांट, एम.बी. दादाभाई, हेनरी स्ट्राकोश थे। इसको आधिकारिक तौर पर रॉयल कमीशन ऑन इंडियन करेंसी एंड फाइनेंस के रूप में जाना जाता था और इसे भारत की वित्तीय प्रणाली की जाँच करने के लिए 25 अगस्त 1925 को स्थापित किया गया था, जिसके निष्कर्षों के आधार पर विधानसभा ने इसे भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम 1934 के नाम से पारित किया था। लेकिन वास्तव में इसकी स्थापना की पृष्ठभूमि डॉ. अंबेडकर के विचारों में निहित थी, क्योंकि जब "भारतीय मुद्रा एवं वित्त पर रॉयल कमीशन" भारत आया था, तो आयोग के प्रत्येक सदस्य के हाथ में डॉ. अंबेडकर की पुस्तक "द प्रॉब्लम ऑफ द रुपीः इट्स ऑरिजन एंड इट्स सॉल्यूशन" थी। इसके अलावा हिल्टन यंग कमीशन के समक्ष डॉ. अंबेडकर ने भारतीय रिज़र्व बैंक की संकल्पना के दिशानिर्देशों, कार्यशैली एवं दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया था और हिल्टन यंग कमीशन की रिपोर्ट को अंबेडकर के इसी कॉन्सेप्ट के आधार पर तैयार किया गया था। कमीशन ने अपनी रिपोर्ट 4 अगस्त, 1926 को प्रस्तु की थी, जिसे सितंबर 1926 के फेडरल रिज़र्व बुलेटिन में संक्षेप में प्रकाशित किया गया था। इस तरह, डॉ. अंबेडकर ने हिल्टन यंग कमीशन को जो सुझाव दिया था, उसी के आधार पर ही 1 अप्रैल, 1935 को भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना हुई थी। हालांकि, अभी तक आरबीआई के गठन में डॉ. अंबेडकर के योगदान को लेकर कोई आधिकारिक साक्ष्य नहीं है। आरबीआई की आधिकारिक वेबसाइट पर हिल्टन यंग कमीशन का जिक्र है, लेकिन अंबेडकर के बारे में कोई जानकारी नहीं है, केवल कुछ किताबों में इसका जिक्र मिलता है।

भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी का वित्तीय प्रशासनः डॉ. अंबेडकर द्वारा लिखित पुस्तक 'भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी का प्रशासन एवं वित्त' में वर्ष 1792 से 1858 के दौरान भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी के प्रशासन एवं वित्त में परिवर्तन की ऐतिहासिक समीक्षा की गई है, जिसमें यह दर्शाया गया है कि कैसे एवं किस तरह सार्वजनिक वित्त के लिए ब्रिटिश शासकों द्वारा भारतीयों पर अत्याचार किये गए हैं। उनका मानना था कि सुरक्षात्मक दृष्टिकोण से सेना पर अत्यधिक खर्च करना राष्ट्र के व्यापक हित में नहीं है और इसके लिए व्यक्तियों से बलात वित्त वसूल करना लोकतांत्रिक दृ ष्टिकोण से उचित नहीं हैं। उन्होंने स्पष्ट किया कि भारत की ब्रिटिश सरकार अपने कुल बजट का 45 से 65 प्रतिशत धन सैन्य शक्ति पर खर्च करती है, जिसके लिए भूमि करों में 54 प्रतिशत तक बढ़ोतरी करती रही है, जबकि इंग्लैण्ड में इसी कर की दर मात्र 10 प्रतिशत रही है। इसलिए, सैन्य शक्ति पर किए जाने वाले बजटीय व्यय में कटौती की जानी चाहिए और सरकार द्वारा नागरिकों से संग्रहित कर राशि को विभिन्न सामाजिक–आर्थिक विकास के कार्यों पर खर्च करना चाहिए ताकि समाज में सामाजिक न्याय एवं समानता स्थापित हो सके।

डॉ. अंबेडकर ने वर्ष 1792 से 1858 की अवधि के दौरान ईस्ट इंडिया कपनी के प्रशासन और वित्त में हुए बदलावों का मूल्यांकन कर निष्कर्ष निकाला कि कंपनी के पास 36 साल के लिए अतिरिक्त राजस्व था, जबकि शेष 30 वर्षों के लिए घाटे में था। हालांकि, संयुक्त अधिशेष संयुक्त घाटे से अधिक था। घाटे का मुख्य कारण यह था कि भारत में धन बचाया नहीं गया था। यह कंपनी के शेयरधारकों के लिए उपहार और लाभांश के रूप में चला गया। जबकि लाभांश भुगतान करने के लिए भारत में धन का प्रवाह पर्याप्त नहीं था, जिसका प्रतिकूल प्रभाव भारत के सार्वजनिक ऋण में वृद्धि पर पड़ा। भारतीय ऋण बढ़ गया क्योंकि कंपनी ने धन उधार लिया था। उन्होंने पाया था कि भारतीय ऋण 70 लाख पाउंड से बढ़कर 607 लाख पाउंड हो गया, जो कि वर्ष 1792 से 1857 के वर्षों में 767 प्रतिशत बढ़ गया था । हालांकि, वर्ष 1800 से 1857 में घरेलू ऋण बांड 66 लाख पाउंड से अधिक नहीं था। आश्चर्य की बात यह थी कि भारतीय कर्ज घरेलू ऋण बांड से अधिक था।

वर्ष 1800 से 1857 की अवधि के दौरान ब्रिटिश सरकार ने अकेले सैन्य खर्च पर 45 से 64 प्रतिशत तक खर्च किया, जबकि भारत में सार्वजनिक कार्यों पर नगण्य राशि खर्च की गई। एक यूरोपीय सैनिक का वेतन एक भारतीय की तुलना में चार गुना अधिक था, यद्यपि युद्ध शांति के नाम पर लड़ा गया था, लेकिन इससे भारत में कोई प्रगति नहीं हुई। शिक्षा पर कोई खर्च नही किया गया और उपयोगी सार्वजनिक कार्यों पर बहुत कम खर्च हुआ। डॉ. अंबेडकर ने जॉन ब्राइट का हवाला देते हुए लिखा कि भारत में सभी प्रकार के सार्वजनिक कार्यों पर खर्च किए गए धन की तुलना में इंग्लैंड के अकेले मैनचेस्टर शहर ने एक वस्तु पानी पर अधिक खर्च किया था। स्पष्ट है कि मैनचेस्टर शहर के पानी के खर्च के बराबर भी ब्रिटिश सरकार ने भारत में सार्वजनिक कार्यों पर खर्च नहीं किया है, जो ब्रिटिश सरकार की शोषक नीति को दर्शाता है। इससे यह भी स्पष्ट है कि भारत का सार्वजनिक ऋण पूरी तरह से युद्धों के कारण था, जिसका भार भारत को उठाना पड़ा है। ईस्ट इंडिया कंपनी ने युद्धों में 69,49,484 पाउंड खर्च किए और इस अनुत्पादक व्यय को गरीबी से ग्रस्त भारतीयों के कंधों पर डाला गया था। भारत का राजस्व गैर–भारतीय प्रयोजन के लिए भारत के बाहर खर्च किया गया । अंबेडकर ने वर्ष 1858 के अधिनियम को विश्लेषित करते हुए बताया कि यह भारत के लिए प्रतिकूल और गैर–जिम्मेदाराना है। आर्थिक दृष्टि से भारत ने इंग्लैंड की समृद्धि के लिए बेहद योगदान दिया, लेकिन बदले में कोई भी आर्थिक लाभ नहीं मिला। इंग्लैंड का योगदान शाति का रखरखाव, पश्चिमी शिक्षा का परिचय, प्रशासनिक और न्यायिक प्रणाली सहित आधुनिक संस्थानों का निर्माण जैसे अनौपचारिक क्षेत्र में था।

डॉ. अंबेडकर के अनुसार, ईस्ट इंडिया कंपनी और ब्रिटिश शासन ने भारत का अत्यधिक आर्थिक शोषण किया, जिससे भारतीय संसाधनों का शोषण व लूट हुई और देश का विकास बाधित हुआ है। उन्होंने अपने शोधों में बताया कि कैसे ब्रिटिश नीतियों ने वित्तीय लूट को बढ़ावा देकर स्थानीय आबादी को शोषण और अधीनता का शिकार बनाया है। उन्होंने ब्रिटिश शासन के आर्थिक चरित्र का आलोचनात्मक विश्लेषण करते हुए ब्रिटिश कंपनियों के लाभ के लिए भारत को आर्थिक पतन के मार्ग पर धकेले जाने की बात कही है। उन्होंने अपने शोध कार्य में सिद्ध किया कि ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी भारत में व्यापार के बहाने आई थी, लेकिन कुछ समय बाद ही उसका मुख्य लक्ष्य भारत का वित्तीय शोषण करना हो गया। उसने भारत के वित्तीय संसाधनों की लूट को बढ़ाकर अंततः राजनीतिक अधिपत्य भी कायम कर लिया। उन्होंने ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के तहत लागू वित्तीय नीतियों के विश्लेषण में दिखाया कि कैसे इन नीतियों का उद्देश्य ब्रिटिश साम्राज्य को समृद्ध करना था न कि भारत का विकास करना। अंबेडकर का मानना था कि ब्रिटिश नीतियों के कारण भारत को एक अविकसित देश बने रहना पड़ा, क्योंकि उसके संसाधनों का उपयोग इंग्लैंड के अपने आर्थिक विकास के लिए किया जाता था। परिणामस्वरूप, ब्रिटिश शासन की वित्तीय नीतियों से हुए नुकसान के कारण स्थानीय आबादी के शोषण और अधीनता की मात्रा बढ़ी है।

भारत में प्रांतीय वित्त का विकासः डॉ. अंबेडकर ने अपनी पुस्तक "ब्रिटिश भारत में प्रांतीय वित्त के विकास" में वर्ष 1833–1921 के दौरान ब्रिटिश भारत में केन्द्र–राज्य के वित्तीय संबंधों पर प्रकाश डाला है। उन्होंने कराधान के माध्यम से अत्यधिक राजस्व संग्रह के लिए ब्रिटिश सरकार की आलोचना करते हुए बताया कि भारत जैसे एक गरीब देश में कराधान पर सीमाए है। नतीजतन, हानिकारक करों और अपव्यय द्वारा चिह्नित दोषपूर्ण वित्तीय प्रणाली के कारण सरकारी वित का केन्द्रीकरण विफल रहा, जिसने केन्द्रीय, प्रांतीय और स्थानीय सरकार जैसे विभिन्न रूपों में बोझ के न्याय संगत वितरण की समस्या ने महत्त्व ग्रहण किया। चूंकि वर्ष 1792 से 1870 के दौरान ब्रिटिश भारत को वित्तीय संकट के कारण मुख्य रूप से वित्त के लिए शाही व्यवस्था की अपर्याप्तता का सामना करना पडा और वित्तीय अपर्याप्तता के परिणामस्वरूप बजट घाटा हुआ। स्पष्ट है कि भारतीय अर्थव्यवस्था की स्थिति कमजोर थी। लेकिन प्रांतों का प्रशासक कार्यकारी की प्राथमिक इकाइयों के अधीन था। सरकारी वित्त के लिए व्यय बजट प्रांतीय सरकारों द्वारा तैयार किया गया था, लेकिन संसाधनों को खोजने की जिम्मेदारी भारत सरकार पर बनी थी, जिसके परिणामस्वरूप भारत सरकार आर्थिक तनाव में आई थी। तब यह महसूस किया गया था कि प्रांतीय सरकारों को अपना राजस्व और व्यय बजट तैयार करना चाहिए। अंततः वर्ष 1871 में प्रांतीय बजट लागू हुआ।

उन्होंने अपनी पुस्तक 'ब्रिटिश भारत में प्रांतीय वित्त का विकास' में विशेष रूप से सार्वजनिक वित्त का उचित उपयोग करने पर बल दिया गया है। उनका कहना था कि सरकारों को जनता से संबंधित धन का इस्तेमाल न केवल नियमों, कानूनों व अधिनियमों के अनुकूल करना चाहिए, बल्कि यह भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि सार्वजनिक प्राधिकारी धन के व्यय में विश्वसनीयता, मित्तव्ययिता व बुद्धिमत्ता से भी काम ले। जनता से प्राप्त किए गए धन के प्रत्येक रूपए का हिसाब–किताब रखना चाहिए। ब्रिटिश भारत के प्रांतीय वित्त विकास के अन्तर्गत वे तीन प्रकार के बजट जैसे असाइमैन्ट द्वारा बजट, आवंटित राजस्व द्वारा बजट तथा साझा राजस्व द्वारा बजट पर चर्चा करते हैं और यह धारणा व्यक्त करते हैं कि इन तीनों में सामंजस्य स्थापित करने वाली शक्ति होनी चाहिए। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि सामूहिक उत्तरदायित्व ही सामंजस्य स्थापित करने वाली शक्ति है। उनके अनुसार जहाँ शासन प्रणाली अच्छी नहीं होगी, वहाँ वित्त व्यवस्था अच्छी होने की आशा नहीं की जा सकती है। डॉ. अंबेडकर का यह विचार उत्तरवर्ती शासन

प्रणालियों के लिए विभिन्न प्रकार की सरकारों के स्तरीकरण का आधार बना है। परिणामस्वरूप विभिन्न स्तरों की सरकारों (केन्द्र, राज्य एवं स्थानीय निकाय) के बीच वित्त संसाधनों के विभाजन एवं वितरण पर सुझाव देने हेतु वित्त आयोग की स्थापना की गयी थी।

उद्योगों का राष्ट्रीयकरणः डॉ. अंबेडकर औद्योगीकरण के बिना भारत का तीव्र विकास असंभव मानते थे। उनके अनुसार, बड़े पैमाने पर रोज़गार सृजन से जन उपभोग के लिए आवश्यक वस्तुओं का उत्पादन होता है। इससे कच्चे माल का उपयोग होता है, विदेशी निर्भरता कम होती है और श्रमिकों की सुरक्षा बढ़ती है, जिससे अंततः देश का समग्र आर्थिक विकास होता है। चूंकि निजी क्षेत्र के उद्योग बड़े पैमाने पर निवेश के अभाव में बड़े उद्योग नहीं बन सकते हैं। इसलिए, सरकार को बड़े पैमाने के उद्योग शुरू करने के लिए आगे आना चाहिए। लघु एवं मध्यम उद्योगों को निजी क्षेत्र में रखा जाना चाहिए। बीमा और परिवहन कंपनियों का राष्ट्रीयकरण किया जाना चाहिए। मज़दूरों को हड़ताल करने का अधिकार दिया जाना चाहिए। आजादी के बाद वर्ष 1948 की भारत सरकार की औद्योगिक नीति डॉ. अंबेडकर की अपेक्षाओं के अनुरूप रही है।

आर्थिक विकास की रणनीतिः डॉ. अंबेडकर का मानना था कि भारत के आर्थिक विकास की रणनीति असमानताओं के उन्मूलन और जनता के शोषण की समाप्ति पर आधारित होनी चाहिए। उनके अनुसार आर्थिक विकास की प्रक्रिया में आर्थिक संकेंद्रण को प्रोत्साहन नहीं मिलना चाहिए। उनका मानना था कि समाज में शोषण के कई आयाम हैं और भारत में सामाजिक या धार्मिक शोषण आर्थिक शोषण से कम दमनकारी नहीं है, इसलिए आर्थिक विकास की प्रक्रिया को प्रोत्साहित करने के साथ सामाजिक या धार्मिक शोषण भी समाप्त किया जाना चाहिए।
डॉ. अंबेडकर ने संविधान समिति के समक्ष एक लोकतांत्रिक राज्य समाजवाद प्रस्तुत किया है, जिसके तहत उन्होंने सुझाव दिया कि 1) सभी बुनियादी उद्योगों का स्वामित्व और संचालन राज्य के पास होना चाहिए। 2) बीमा और कृषि का राष्ट्रीयकरण एवं प्रबंधन राज्य द्वारा किया जाना चाहिए। 3) उत्पादक संसाधनों का रखरखाव राज्य द्वारा किया जाना चाहिए। 4) साझा उपज और उत्पादों का न्यायसंगत वितरण किया जाना चाहिए। 5) भूमि या उद्योग अधिग्रहण के लिए बांड के रूप में मुआवजे का प्रावधान किया जाना चाहिए। 6) सामूहिक खेती के लिए गाँव और ग्रामीण परिवारों के बीच भूमि का वितरण किया जाना चाहिए। 7) जमींदार, काश्तकार और खेतिहर मजदूरों के बीच कोई भेदभाव नहीं किया जाना चाहिए। 8) सभी कृषि निवेश जैसे पूँजी, बीज, उर्वरक आदि सरकार द्वारा सामूहिक खेती के लिए उपलब्ध कराए जाने चाहिए। 9) भू–राजस्व कर के भुगतान के बाद ही कृषि आय का वितरण किया जाना चाहिए। 10) नियमों का पालन न करने वालों के लिए उचित दंड का प्रावधान किया जाना चाहिए। वे चाहते थे कि लोकतांत्रिक समाजवाद को संविधान में शामिल किया जाए ताकि कोई भी विधायिका न तो इसे बदल सके और न अस्वीकार कर सके। लेकिन संविधान समिति द्वारा इन सुझावों को पूर्णतः स्वीकार न किए जाने के कारण लोकतांत्रिक समाजवाद उनकी उम्मीदों के अनुरूप अस्तित्व में नहीं आ सका। हालांकि, यदि इसे पूर्णतः स्वीकार किया गया होता, तो मज़दूरों, किसानों और गरीबों की स्थिति शायद मौजूदा स्थिति से अलग होती।

मानव पूंजी की अवधारणाः डॉ. अंबेडकर का मानना है कि भारत के आर्थिक विकास के लिए मानव पूँजी की अवधारणा तब तक निरर्थक है, जब तक कि सामाजिक असमानता और छुआछूत खत्म नहीं हो जाता है। उनका मानना है कि बिना सामाजिक समानता और उचित सम्मान के गरीब वर्ग और दलित समूह का उपयोग भारत के आर्थिक उत्थान के लिए नहीं किया जा सकता है, क्योंकि वे पहले से ही सामाजिक और मानवीय गरिमा से वंचित थे। उन्होंने मानव पूँजी के विकास के लिए सामाजिक स्वतंत्रता और समानता को मूलभूत आवश्यकता माना है, न कि केवल शिक्षा या कौशल को। उनके अनुसार यदि समाज के निचले तबके को समान सामाजिक प्रतिष्ठा नहीं मिलती, तो उनकी मानव पूँजी का कोई अर्थ नहीं रह जाता और वह आर्थिक विकास में योगदान नहीं दे सकते। उन्होंने तर्क दिया कि किसी व्यक्ति की मानव पूँजी का लाभ उठाने के लिए, उसको इंसान के रूप में सम्मान और अधिकार मिलना चाहिए। उनका मानना है कि वास्तविक आर्थिक विकास तभी संभव है, जब सभी को भेदभाव रहित समान अवसर मिलेंगे।

महिलाओं का आर्थिक उत्थानः डॉ. अंबेडकर ने अपने आर्थिक विचारों में महिलाओं के आर्थिक विकास एवं सशक्तिकरण पर भी बल दिया है। वे महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण और सामाजिक न्याय के प्रबल समर्थक थे। महिलाओं के आर्थिक स्तर को ऊपर उठाने और उन्हें देश की मुख्यधारा में जोड़ने के लिए उनका आर्थिक सशक्तिकरण आवश्यक है। उन्होंने कहा कि भारत में पितृसत्तात्मक व्यवस्था के कारण महिलाएं सदियों से पुरुषों द्वारा उपेक्षित एवं विभिन्न सामाजिक–आर्थिक दृष्टि से दयनीय स्थिति में अपना जीवन व्यतीत करती रही हैं। महिलाओं के आर्थिक विकास एवं सशक्तिकरण के बिना किसी भी देश का आर्थिक विकास असंभव है। इसलिए, इनकी सामाजिक एवं

आर्थिक स्थिति एवं स्तर में सुधार करना आवश्यक है। उनके अनुसार "मैं प्रगति की उस डिग्री के द्वारा समुदाय की प्रगति को मापता हूं जिसे महिलाओं ने प्राप्त किया है।"

उनके अनुसार, महिलाओं की सामाजिक स्थिति और समानता के विकास के बिना आर्थिक विकास में उनकी भागीदारी असंभव है। उदाहरण के लिए, भारत में महिलाओं की खराब आर्थिक स्थिति के कारण, भारत की आर्थिक प्रगति बाधित रही है। इसलिए, महिलाओं की आर्थिक स्थिति में सुधार लाना और उन्हें समान अधिकार एवं व्यवसाय की स्वतंत्रता प्रदान करना महत्वपूर्ण है। अंबेडकर का मानना था कि महिलाओं को भी पुरुषों के समान अवसर मिलने चाहिए, विशेषकर आर्थिक क्षेत्र में, ताकि वे अपनी समस्याओं का सामना कर सकें और आत्मनिर्भर बन सकें। उन्होंने बाल विवाह और देवदासी प्रथा जैसी कुरीतियों का विरोध किया, जो महिलाओं को आर्थिक रूप से कमजोर और शोषित बनाती थीं। उन्होंने महिलाओं के शिक्षित होने पर ज़ोर देते हुए कहा कि शिक्षा उन्हें अपने अधिकारों के प्रति जागरूक करती है और आर्थिक रूप से सशक्त बनाती है।

श्रम सुधार एवं कल्याणः डॉ. अंबेडकर एक समाज सुधारक की दिशा में मानवतावादी दृष्टिकोण भी रखते थे, इसीलिए उन्होंने कारखानों एवं मिलों में कार्य करने वाले श्रमिकों की समस्याओं के निराकरण, सामाजिक कल्याण एवं आर्थिक उत्थान की दिशा में भी विचार दिए हैं। उनके अनुसार औद्योगिक प्रबंधन में श्रमिकों की भागीदारी होनी चाहिए। उनका मानना था कि श्रमिकों को अपनी मांगों को सरकार और मालिकों के सामने रखने के लिए संगठित होने और सामूहिक रूप से सौदेबाजी करने का अधिकार होना चाहिए। वे चाहते थे कि श्रमिकों के अधिकरों और हितों के लिए श्रम संघों (ट्रेड यूनियनों) का गठन किया जाना चाहिए ताकि श्रमिक वर्ग सामूहिक रूप से अपने हितों की सुरक्षा के लिए आंदोलन और शोषक पूंजीपतियों के खिलाफ हडतालें आदि कर सकें। उनका विचार था कि श्रमिकों के शोषण को रोकने और इनके आर्थिक कल्याण के लिए कार्य के निश्चित घंटे, अवकाश, न्यूनतम मजदूरी, स्वास्थ्य सुविधाओं, सामाजिक सुरक्षा आदि सुनिश्चित करने हेतु स्पष्ट निर्देश एवं नियम होने चाहिए ताकि किसी भी श्रमिक का मिल मालिकों द्वारा शोषण न हो सके।

डॉ. अंबेडकर का मानना था कि समाज में भेदभाव विशेष रूप से शोषण पर आधारित था, जो श्रमिकों के नियोजन में भी परिलक्षित होता है, जिससे श्रमिकों की प्रतिभा और उत्पादकता प्रभावित होती है। इसलिए श्रम सम्मान की पहली शर्त है कि प्रत्येक श्रम को मनुष्य के रूप में माना जाना चाहिए और सभी के लिए समानता व स्वतंत्रता होनी आवश्यक है। लोगों की योग्यता और उत्पादन शक्ति बढ़ाने के लिए उन्हें तकनीकी शिक्षा दी जाए। इसके लिए सरकार की ओर से उद्योग चलाने और प्रबंध करने का सुझाव दिया गया। कारखाने के कामगारों के रोजगार तथा कल्याण के लिए बेहतर कानून बनवाना भी उनका एक लक्ष्य था। काम के घंटे तय करना, प्रमोशन के अवसर देना, वेतन, छुट्टियां, आवास की उपयुक्त सुविधा आदि के लिए प्रभावी कानून बनवाने के लिए सरकार को बाध्य करना उनके द्वारा स्थापित लेबर पार्टी के अन्य लक्ष्य थे (डॉ. एम. एल. परिहार, पृष्ठ–181)।, अंबेडकर के अनुसार जो सुविधाएं औद्योगिक श्रमिकों को दी जाती है वहीं सुविधाएं कृषि श्रमिकों को दी जानी चाहिए क्योंकि कृषि श्रम भी इससे अलग नहीं है। उनके अनुसार कार्य की दशाएं प्रावधाई निधि, नियोक्ता के दायित्व, कार्य की क्षतिपूर्ति, स्वास्थ्य बीमा, पेंशन आदि के लाभ सभी प्रकार के श्रम को प्राप्त होने चाहिए, चाहे वह औद्योगिक श्रमिक हो या फिर कृषि श्रमिक (डब्ल्यू. एन. कुबेर, पृष्ठ–130)। वर्ष 1918 में भारतीय कृषि में लघु जोतों की समस्या पर प्रकाशित उनका शोधपत्र खेती में छिपी बेरोजगारी सहित, उत्तरवर्ती विकास अर्थशास्त्र के कई विषयों की भविष्यवाणी करने में लगभग भविष्यसूचक रहा है। इसमें उन्होंने बताया कि अतिरिक्त श्रम को अवशोषित करने के लिए भारत को औद्योगीकरण की आवश्यकता क्यों है, जो यह उनके राजनीतिक प्रतिद्वंद्वी, महात्मा गांधी के देहाती दृष्टिकोण के बिल्कुल विपरीत था।

डॉ. अंबेडकर का मानना था कि श्रमिकों का उत्थान सामाजिक न्याय और आर्थिक समानता की स्थापना के लिए ज़रूरी है, जिसके लिए उन्होंने उचित वेतन, कार्य सुरक्षा और संगठित होने के अधिकार जैसे श्रम सुधारों का समर्थन किया। उन्होंने ऐतिहासिक भेदभावों को खत्म करने के लिए रोजगार में सकारात्मक कार्रवाई को प्रोत्साहित किया। उन्होंने श्रमिकों के लिए उचित वेतन, काम करने की बेहतर स्थिति, स्वास्थ्य सुरक्षा जैसे अधिकारों पर बल देते हुए कोयला खान सुरक्षा संशोधन विधेयक और अभ्रक खान श्रमिक कल्याण कोष जैसे कानूनों का निर्माण किया, जिनसे श्रमिकों के आवास, जलापूर्ति, शिक्षा, मनोरंजन जैसी सुविधाओं को सुलभ बनाया गया। उनके अनुसार, समाज में व्याप्त शोषणकारी व्यवस्था को खत्म करने और श्रमिकों को गरिमापूर्ण जीवन देने के लिए कानूनी ढांचे को सामाजिक परिवर्तन के साधन के रूप में देखा जाना चाहिए। उनके द्वारा 1945 में प्रतिपादित 'श्रम चार्टर' भारत में श्रम कल्याण योजनाओं का आधार बना, जिसमें श्रमिकों की सामाजिक सुरक्षा, महंगाई भत्ता, लीव बेनिफिट, कर्मचारियों का इंश्योरेंस, मेडिकल लीव, एक जैसा काम–एक जैसा भुगतान, न्यूनतम मजदूरी, सावधिक वेतन स्केल का रिवीज़न आदि कल्याणकारी सिद्धांतों को उजागर किया गया। डॉ. अंबेडकर के प्रयासों के परिणामस्वरूप काम करने के समय को 12

घंटे से घटाकर 8 घंटे कर दिया गया था। यह बदलाव नवंबर 1942 में नई दिल्ली में इंडियन लेबर कॉन्फ्रेंस के सातवें सेशन में हुआ था।

डॉ. अंबेडकर समान कार्य के लिए समान वेतन के समर्थक थे और उन्होंने वायसराय आधिकारिक सभा में श्रम मंत्री और औद्योगिक विशेषज्ञों के रूप में भारत में "समान कार्य के लिए समान वेतन" कानून बनवाया था। चूंकि ब्रिटिश सरकार के श्रम क़ानून भेदभावपूर्ण थे, इसलिए, भारतीय संविधान का मसौदा तैयार करते समय उन्होंने अनुच्छेद–39 (डी) को समाहित करने के लिए महत्वपूर्ण प्रतिबद्धता निभाई थी, जो राज्य के लोक नियोजन में समान वेतन की पुष्टि के लिए निर्णय लेने से संबंधित है। उन्होंने इंगित किया कि महिलाओं की सामाजिक स्थिति और निष्पक्षता के निर्माण के बिना वित्तीय सुधार में समर्थन की कल्पना नहीं की जा सकती है, क्योंकि भारत की आर्थिक उन्नति बाधित होने का एक कारण महिलाओं की दयनीय आर्थिक स्थिति है, जिसके लिए महिलाओं की आर्थिक स्थिति में सुधार करना, उन्हें समान अधिकार और व्यवसाय का अवसर देना महत्वपूर्ण है। इसलिए, देश में समान कार्य के लिए समान वेतन का प्रावधान बहुत आवश्यक है।

उन्होंने दलितों और उत्पीड़ित समुदायों को रोजगार में समान अवसर दिलाने के लिए सकारात्मक कार्रवाई के उपायों को लागू करने का समर्थन किया ताकि ऐतिहासिक भेदभाव को दूर किया जा सके। उनके विचारों में मजदूर केवल आर्थिक समानता ही नहीं, बल्कि स्वतंत्रता और आत्म–सम्मान के साथ जीने का भी हकदार है। उनका मानना था कि श्रमिकों का उत्थान केवल आर्थिक समृद्धि का मामला नहीं है, बल्कि यह सामाजिक न्याय और आर्थिक समानता स्थापित करने के लिए भी आवश्यक है। वे चाहते थे कि औद्योगिक प्रबंधन में मजदूरों की भागीदारी भी होनी चाहिए जिससे उनके साथ किसी भी प्रकार का शोषण न हो सके। उनके अनुसार "यदि औद्योगिक प्रबंधन सामाजिक न्याय पर आधारित होता हैं तो औद्योगिक शांति कायम रह सकती है"। इसके लिए उन्होंने केन्द्र सरकार में अनुसूचित जाति एवं जनजाति वर्ग के लिए 5 से 6 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था करने का प्रस्ताव दिया था, जिससे देश में एक न्यायपूर्ण औद्योगिक प्रबंधन कायम हो सके।

निष्कर्ष एवं सुझावः डॉ. अंबेडकर भारत के पहले अर्थशास्त्री थे जिन्होंने आर्थिक विकास पर व्यावहारिक विचार प्रस्तुत किए हैं। वे एक उच्च प्रशिक्षित अर्थशास्त्री थे, लेकिन अर्थशास्त्र में उनके योगदान को अर्थशास्त्र की मुख्यधारा में मान्यता नहीं मिल पाई है। इसका एक कारण यह भी था कि वे समय के साथ समाजवाद के करीब पहुँचते गए और उनके विचार भी बदलते गए। 1920 के दशक के पश्चात उन्होंने अर्थशास्त्र को लगभग त्याग दिया और अपना अधिकांश समय राजनीति, कानून और सामाजिक सुधार में लगा दिया। इसलिए, वे एक अर्थशास्त्री की तुलना में एक राजनेता के रूप में अधिक लोकप्रिय थे। लेकिन अर्थशास्त्र के क्षेत्र में उन्होंने जो भी योगदान दिया है, वह उल्लेखनीय और अविस्मरणीय है। जैसा कि अंबीराजन (1999, पृष्ठ–3282) ने कहा है कि अंबेडकर का निष्कर्ष स्पष्ट रूप से रूढ़िवादी और स्वचालित मौद्रिक प्रबंधन के माध्यम से मूल्य स्थिरता की ओर है। यह वर्तमान में भी प्रासंगिक है कि बढ़ते बजट घाटे और स्वचालित मौद्रीकरण को रोकने के लिए हम एक स्वचालित तंत्र के माध्यम से तरलता निर्माण पर प्रभावी नियंत्रण कर सकते हैं।

डॉ. अंबेडकर न केवल एक समाज सुधारक व सामाजिक दार्शनिक थे, बल्कि वे उत्कृष्ट अर्थशास्त्री भी थे, जो अपने समकालीन अर्थशास्त्रियों में सार्वजनिक वित्त के अग्रणी अर्थशास्त्री एडविन सैलिगमैन से प्रभावित थे। वे आर्थिक क्षेत्र में एक भविष्य वक्ता थे, क्योंकि उन्होंने उस समय जो आर्थिक सिद्धांत दिए, वे आज भी प्रासंगिक है, वे चाहे कृषि के संबंध में हो या फिर भारतीय मुद्रा, प्रांतीय वित्त का विकास, कराधान नीति आदि। कृषि क्षेत्र में वे एक तरफ भूमि सुधार की बात करते हैं तो दूसरी तरफ वे भारतीय मुद्रा के संबंध में उचित स्वर्ण प्रतिमान की बात पर जोर देते है ताकि भारतीय मुद्रा का मूल्य स्थिर रहे। प्रांतीय वित्त के विकास में सार्वजनिक राजस्व के बटबारे के लिए उनके द्वारा दिया गया वित्त आयोग का विचार सराहनीय रहा हैं, क्योंकि यह केन्द्र और राज्य सरकारो के बीच सार्वजनिक राजस्व का उचित विभाजन करने में सक्षम रहा है। कराधान पर उनके विचार प्रशंसा के पात्र रहे है, क्योंकि वर्तमान में जो कर नीति भारत में संचालित है, वह उन्हीं के आर्थिक विचारों पर आधारित हैं। विभिन्न आर्थिक विषयों पर उनका विश्लेषण अनुभवजन्य और ऐतिहासिक नींव पर आधारित था। उनके अनुसार प्रमुख उद्योग राज्य के स्वामित्व में संचालित होंगे। बुनियादी लेकिन गैर गहत्वपूर्ण उद्योग राज्य के स्वामित्व में होंगे और राज्य या उसके द्वारा स्थापित निगमों के माध्यम से संचालित होंगे। कृषि एक राज्य उद्योग होगा, जिसमें सामूहिक कृषि को प्राथमिकता दी जाएगी। उन्होंने औद्योगीकरण की आवश्यकता पर भी जोर दिया ताकि अधिशेष श्रम को कृषि क्षेत्र से अन्य उत्पादक क्षेत्र में स्थानातरित किया जा सके। श्रम समस्या, जल संसाधन नीति, महिलाओं का आर्थिक उत्थान आदि में उनके विचार एक व्यावहारिक अर्थशास्त्री या आर्थिक दार्शनिक का परिचय देते हैं। इस तरह, उनके आर्थिक विचारों का केंद्रीय दर्शन 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय (अधिकतम लोगों का अधिकतम कल्याण)' था। वे चाहते थे कि राज्य द्वारा अपनी आर्थिक नीतियाँ समाज के सभी लोगों के कल्याण को ध्यान में रखकर बनाई जानी चाहिए।

वास्तव में डॉ. अंबेडकर एक दूरदर्शी जनवादी अर्थशास्त्री थे। राष्ट्र निर्माण में उनका योगदान व्यापक, अंतदृष्टिपूर्ण और भारतीय संविधान के निर्माण से परे बहुत कुछ है। राज्य समाजवाद की उनकी योजना यद्यपि स्वीकार नहीं की गई, जोकि बहुत विकास उत्प्रेरक और रिफ्लेशनरी थी। उन्होंने देश की पूरी आर्थिक संरचना को संविधान के कानून के अंतर्गत लाने की बात कही, ना कि संसद द्वारा बनाए गए कानूनों के अंतर्गत। अपनी योग्यता और राष्ट्र निर्माण में अपने योगदान के लिए जाने जाने वाले डॉ. अंबेडकर को तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने पहली कैबिनेट में कानून मंत्री का पोर्टफोलियो देने के लिए आमंत्रित किया ताकि मुश्किलों से हासिल की गई स्वतंत्रता को अधिक तीव्रता से सुदृढ़ किया जा सके। उन्हें आर्थिक, राजनीतिक और कानूनी समझ एवं योगदान के कारण 'मॉर्डन मनु' कहा जाता है। वे श्रम कल्याण और महिला अधिकारों के प्रति वास्तविक योगदान के लिए मानवीय सम्मान के अग्रदूत कहे जाते हैं। उन्होंने काम के दैनिक घंटों को 12 घंटे से घटाकर 8 घंटे करने के संघर्ष का नेतृत्व किया। उन्होंने वर्ष 1916 में महिला सशक्तिकरण पर शोध आलेख लिखा और भारत के प्रथम कानून मंत्री होने के नाते अपने पद का इस्तेमाल करते हुए उन्होंने महिलाओं को विरासत और संपत्ति का अधिकार देने वाला हिंदू कोड बिल प्रस्तुत किया। उन्हें भारतीय रिजर्व बैंक, नेशनल पावर ग्रिड सिस्टम, सेंट्रल तकनीकी पावर बोर्ड; रोजगार कार्यालय, केंद्रीय जल परियोजना, नेविगेशन सिस्टम जैसे कई शीर्ष संस्थानों की स्थापना अथवा अवधारणा का श्रेय जाता है। पृष्ठभूमि में उनका काम इन सभी संस्थानों और परियोजनाएं के लिए न केवल प्रकृति में मौलिक है बल्कि महत्वपूर्ण रूप से अग्रणी है।

उनके विशाल ज्ञान के साथ–साथ उनके विश्लेषणात्मक तर्क गढ़ने, अग्रणी देशों के संविधानों की उनकी समझ और ऐतिहासिक सोच के प्रति उनकी उत्सुकता ने उन्हें 'भारत के संविधान' जैसे अद्भुत दस्तावेज को प्रारूपित करवाने में मदद की, जिससे उन्हें "संविधान के जनक" की उपाधि दी गई है। उनका मानना था कि रचनात्मक और प्रासंगिक नीतिगत निष्कर्षों के लिए अर्थशास्त्र का अध्ययन आवश्यक है। शायद अर्थशास्त्र में उनकी विश्लेषणात्मक रूचि और अनवरत लगाव के कारण ही अर्थशास्त्री सी. रंगराजन ने कहा है कि "अर्थशास्त्र डॉ. अंबेडकर का पहला प्यार था"। मौद्रिक अर्थशास्त्र, प्रांतीय और सार्वजनिक वित्त, संघीय ढांचे और कृषि अर्थशास्त्र पर उनके लेखन एवं सामाजिक–आर्थिक सुधारो पर उनके विचार और गुणवत्तापूर्ण राजनीतिक विकास को संवैधानिक आकार दिलवाना न केवल उनके दूरदर्शी और अग्रणी कार्य हैं, बल्कि ऐतिहासिक रूप से प्रामाणिकता और मौलिकता में अद्वितीय हैं। हालांकि, भारतीय आर्थिक विचारों में काफी समय तक उनके विचारों की अनदेखी की गई। ऐसा प्रतीत होता है कि कानूनी सिद्धांत एवं व्यवहार, सामाजिक–सांस्कृतिक दर्शन और राजनीति विज्ञान जैसे अनार्थिक क्षेत्रों में उनके योगदान जिससे उन्होंने भारतीय संविधान के वास्तुकार होने की उपाधि अर्जित की, अर्थशास्त्र में उनके लेखन पर भारी पड़ गया था। जबकि उनके आर्थिक विचार भी उतने ही सार्थक और महत्वपूर्ण हैं। हालांकि, उनके आर्थिक विचार बिखरे हुए हैं, जिन्हें नए सिरे से अध्ययन करने की आवश्यकता है, क्योंकि संविधान लागू होने के 75 साल बाद भी उनके द्वारा 'भारत' के बारे में देखा गया सपना अधूरा है, क्योंकि देश की विकास प्रक्रिया अभी समावेशी विकास और सम्पोषणीय विकास से दूर है। उनके सामाजिक न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व से जुड़े मुद्दे अभी भी अनसुलझे हैं। इसलिए, मौजूदा विकास प्रक्रिया और आर्थिक सोच की वर्तमान गुणवत्ता को समृद्ध करने, सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक अवयवों के गुणात्मक ज्ञान द्वारा शासन और नीति निर्माण में सुधार द्वारा यथोचित परिवर्तन के लिए उनके आर्थिक विचारों का पुनर्मूल्यांकन आवश्यक है।

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि डॉ. अंबेडकर के आर्थिक दर्शन के सिद्धांत महत्वपूर्ण होने के साथ व्यवहार में लागू भी किए गए हैं। उनका मानवतावादी आर्थिक दर्शन प्रत्यक्ष रूप से मनुष्य के कल्याण से जुड़ा हुआ था और इस दृष्टि से उन्हें प्रो. अल्फ्रेड मार्शल, प्रो. आर्थर सेसिल पीगू जैसे नव प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों के समकक्ष रखा जा सकता है। उनके आर्थिक विचारों का स्वतंत्रता, समानता, प्रजातंत्र, समाजवाद आदि में महत्वपूर्ण योगदान रहा है, जिसके कारण वे मिश्रित अर्थव्यवस्था का प्रणेता कहे जा सकते हैं।

स्रोत एवं संदर्भः

1. हेब्बार, डी. एल. (2023)। इकॉनमिक थॉट्स ऑफ डॉ. अंबेडकर, इंटरनेशनल जर्नल फॉर मल्टीडिसिप्लिनरी रिसर्च, वाल्यूम–5, अंक–5, सितंबर–अक्टूबर 2023, पृष्ठ 1–5, आईएसएसएनः 2582–2160।
2. कुमार, अंजन (2022)। रिलेवेंस एंड इम्पैक्ट ऑफ डॉ. बी. आर. अंबेडकर्स आइडियाज ऑन इंडियन इकॉनमिक एंड प्रोब्लम्स ऑफ रुपी, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ नॉवेल रिसर्च एंड डेवलपमेंट, वॉल्यूम–7, अंक–7, जुलाई–2022, पृष्ठ 627–637, आईएसएसएनः 24564184।
3. योगानंदम, जी. एवं करीम, ए. अब्दुल (2022)। डॉ. बी. आर. आंबेडकर्स कंट्रीब्यूशन टु इकॉनमिक एंड सोशल इश्यूजः अ थ्योरिकल असेसमेंट, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ ऑल रिसर्च एजुकेशन एंड साइंटिफिक मेथड्स, वॉल्यूम–10, अंक–12, दिसंबर–2022, पृष्ठ 1706–1715, आईएसएसएनः 24556211।

4. मदावी, ए. (2022)। रोल ऑफ डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर इन इकॉनमिक डेवलेपमेंट ऑफ इंडिया, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ क्रिएटिव रिसर्च थॉट्स, 10(1)।
5. देशमुख, पी. (2021)। रिलेवेंस ऑफ भारत रत्न डॉ. बी.आर. अंबेडकर्स इकॉनमिक थॉट्स इन प्रजेंट इरा, जर्नल ऑफ कॉमर्स एंड मैनेजमेंट थॉट, 12(4), पृष्ठ 251–255।
6. कुमार, एस. (2021)। डॉ. बी. आर. अंबेडकरः एक सच्चे भारतीय, यूनिवर्सल रिसर्च रिपोर्ट्स, वाल्यूम–8, अंक–1, 2021, पृष्ठ 52द्57, आईएसएसएनः 2348–5612
7. आदित्य, हरित (2021)। इकॉनमिक्स ऑफ डॉ. बी.आर. अंबेडकर, जर्नल ऑफ इमर्जिंग टेक्नोलॉजीज एंड इनोवेटिव रिसर्च, वाल्यूम–8, अंक–12, आईएसएसएनः 23495162।
8. सिंह, बी. पी. (2020)। डॉ. बीआर आंबेडकर्स फिलॉसफी ऑफ कॉन्स्टिट्यूशनलिज्म ऐज एन इंस्ट्रूमेंट ऑफ जस्टिसः सोशल, इकॉनमिक एंड पोलिटिकल, इंडियन जर्नल ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, 66(4), पृष्ठ 596–608।
9. नगेश्वरी, आर. (2019)। इकॉनमिक विजन ऑफ डॉ. बीआर अंबेडकर, शानलैक्स इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इकोनॉमिक्स, 7(4), पृष्ठ 29–35।
10. कुमार एस. (2019)। अंबेडकर के आर्थिक विचार और योगदान, आईओएसआर जर्नल ऑफ ह्यूमैनिटीज एंड सोशल साइंस, वाल्यूम–24, अंक–3, श्रृंखला–1 (मार्च 2019) 50–54, आईएसएसएनः 22790837।
11. मौर्य, राजेश एवं किरार, संजय कुमार (2019)। डॉ. भीमराव अंबेडकर के सामाजिक–आर्थिक विचार, रिसर्च ऑफ रिव्यू, वाल्यूम–8 अंक मई–2019, पृष्ठ 1–11, ऐछः 2249–894ग।
12. परिहार, एम.एल. (2017)। बाबा साहब अंबेडकर लाइफ एंड मिशन, बुद्धम पब्लिशर्स, अप्रैल 2017, पृष्ठ–181।
13. कुबेर, डब्ल्यू. एन (2017)। "डॉ. बी.आर. अंबेडकर" प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, जनवरी 2017, पृष्ठ–130, आईएसबीएनः 978–8123025384।
14. अरोड़ा, गुलजीत के. (2016)। द राइजिंग इंडिया एंड इकॉनमिक थिंकिंग ऑफ डॉ. अंबेडकर, एकेडेमिया, वॉल्यूम–1, अंक–2, जून–दिसंबर, 2016 और वॉल्यूम–2, अंक–1, जनवरी–जून, 2017, पृष्ठ 37–48, आईएसएसएनः 23950161।
15. केंद्रीय जल आयोग (2016), जल संसाधन, नदी विकास एवं गंगा संरक्षण विभाग, नई दिल्ली द्वारा जल संसाधनों के विकास में अंबेडकर का योगदान विषय पर प्रकाशित स्मारक ग्रन्थ, द्वितीय संस्करण, 2016, पृष्ठ 233–274।
16. आर्य, आर. के एवं तपन, सी. (2014)। इकॉनमिक थॉट्स ऑफ डॉ. भीमराव अंबेडकर इन रिस्पेक्ट टु एग्रीकल्चर सेक्टर, डेवलपिंग कंट्री स्टडीज़, 4(25), पृष्ठ 84–96।
17. बग्गा, पी.एस. (2014)। डॉ. अंबेडकर द्वारा अर्थशास्त्र का अभ्यास और समकालीन भारत में इसकी प्रासंगिकता, जर्नल ऑफ बिजनेस मैनेजमेंट एंड सोशल साइंसेज रिसर्च, वाल्यूम–3, अंक–10, अक्टूबर 2014।
18. सिंगरिया एम.आर. (2013)। डॉ. बी.आर. अंबेडकरः एक अर्थशास्त्री के रूप में, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ ह्यूमैनिटीज एंड सोशल साइंस इन्वेंशन, आईएसएसएनः 23197722।
19. आईईए पब्लिकेशन्स (2013)। "डॉ. बी.आर.अंबेडकर्स इकॉनमिक एंड सोशल थॉट्स एंड दियर कंटेम्पररी रिलेवेंस", इंडियन इकॉनमिक एसोसिएशन (आईईए), आईईए न्यूज़लेटर, आईईए पब्लिकेशन्स, 2013, 10।
20. राम, ओम प्रकाश, सत्य रत्न सिंह एवं शिव शंकर (2013)। डॉ. बी.आर. अंबेडकर के आर्थिक विचारः एक सिंहावलोकन, द इंडियन इकोनॉमिक जर्नल, 2013, 61–63, आलेख–8।
21. हीरालाल वामन चव्हाण (2013)। "द इकोनॉमिक थॉट ऑफ़ डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर", द इंडियन इकोनॉमिक जर्नल, 2013, 155, आलेख–22।
22. सरकार, बादल (2013)। "डॉ. बी. आर. अंबेडकरः थियरी ऑफ स्टेट सोशलिज्म", इंटरनेशनल रिसर्च जर्नल ऑफ सोशल साइंसेज वॉल्यूम–2 (8), 38–41, 2013।
23. रे, इशिता आदित्य एवं रे, सर्बप्रिया (2011)। "बी.आर.अंबेडकर एंड हिज फिलॉसफी ऑफ लैंड रिफार्मः एन इवैल्यूएशन", एफ्रो एशियन जर्नल ऑफ सोशल साइंसेज, वाल्यूम–2, अंक–2.1।
24. सुकुमार, नारायण (2011)। बी. आर. अंबेडकरः डेमोक्रेसी एंड इकॉनमिक थियरी, "इंडियन पोलिटिकल थॉट्सः थीम्स एंड थिंकर्स", (संपादक) एम. पी. सिंह और हिमांशु रॉय, पियर्सन प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ 361, 2011, आईएसबीएनः 9788131758519
25. इंगले, एम.आर (2010)। वर्तमान परिदृश्य में डॉ. अंबेडकर के आर्थिक दर्शन की प्रासंगिकता, इंटरनेशनल रिसर्च जर्नल, सितंबर–2010।
26. ननचारैया, जी. (2007)। विनिमय दर पर व्यापार संतुलन और वितरण, एस. थोराट एवं आर्यमा (संपादक), अंबेडकर इन रेट्रोस्पेक्टः एसेज़ ऑन इकोनॉमिक्स, पॉलिटिक्स एंड सोसाइटी, 2007, पृष्ठ 49–57।
27. कीर, धनंजय, (2005)। डॉ. अंबेडकरः लाइफ एंड मिशन, लोकप्रिय प्रकाशन, मुंबई, पृष्ठ 403–404।
28. छीपा, एम.एल. एवं शर्मा, शंकर लाल (2004)। भारतीय आर्थिक चिंतन, कॉलेज बुक हाउस प्रकाशन, जयपुर–3, द्वितीय संस्करण, 2004, पृष्ठ 334–352।
29. अंबीराजन, एस (1999)। "अम्बेडकर्स कंट्रीब्यूशन टू इंडियन इकॉनमिक्स", इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, वाल्यूम–34, अंक–46/47 (20–26 नवंबर, 1999), पृष्ठ 3280–3285।

30. जाधव, नरेंद्र (1991)। "निग्लेक्टेड इकॉनमिक थॉट्स ऑफ बाबासाहेब अंबेडकर", इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, वाल्यूम–26, अंक–15 (13 अप्रैल, 1991), पृ. 980–982।
31. अहीर, डी. सी (1990)। द लेगेसी ऑफ डॉ. बी. आर. अंबेडकर, बी.आर. पब्लिशिंग कॉर्पोरेशन, नई दिल्ली, 1990, पृष्ठ–357, आईएसबीएनः 9788170186038
32. सिम्हा, एसएलएन (1970)। 1935 से पहले मुद्रा, विनिमय और बैंकिंग, भारतीय रिज़र्व बैंक का इतिहास 1935–51, भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई।
33. दुर्गादास (1969)। इंडियाः फ्रॉम कर्ज़न टू नेहरु एंड आफ्टर, कॉलिंस प्रकाशन, लन्दन, 1969, पृष्ठ–236।
34. "टी.वी.ए. एक्सपर्ट्स टू एडवाईस ऑन दामोदर वैली प्रोजेक्ट", इंडियन इनफार्मेशन, 1 अप्रैल 1946, राइटिंग्स एंड स्पीचेस ऑफ़ डॉ बी. आर. अंबेडकर, वाल्यूम–10, महाराष्ट्र सरकार, बम्बई, पृष्ठ–403।
35. अंबेडकर, बी.आर (1923)। द प्रोब्लम्स ऑफ द रुपीः इट्स ओरिजिन एंड इट्स सोल्यूशन, शिक्षा विभाग, महाराष्ट्र सरकार।
36. अंबेडकर, बी.आर (1925)। द इवैल्यूएशन ऑफ प्रोविंशियल फाइनेंस इन ब्रिटिश इंडिया, शिक्षा विभाग, महाराष्ट्र सरकार।

*****

आलेख उद्धरित करें:	कुमार, सुरेन्द्र एवं कुशवाहा, योगेन्द्र कुमार (2025)। डॉ. बी आर अंबेडकर के आर्थिक विचारों का अवलोकन, बुंदेलखंड जर्नल ऑफ अकादमिक रिसर्च (बीजेएआर), वाल्यूम-1, अंक-1, जुलाई-सितंबर 2025, पृष्ठ 47-62।